ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला-हिन्दी ग्रन्थाङ्क—१४०

सन्त-विनोद

नारायणप्रसाद जैन

VIDYA PRAKASHAN

भा र ती य ज्ञा न पी ठ
का शी

ज्ञानपीठ-लोकोदय-ग्रन्थमाला
सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन

प्रथम संस्करण
१९६१ ई०
मूल्य दो रुपये

प्रकाशक
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

मुद्रक
बाबूलाल जैन फागुल्ल
सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी

परम पूज्य

स्वामी श्री बालकृष्णदासजी साहबको

सादर और सप्रेम

प्रकाश-पुञ्ज

सन्त अर्थात् मूर्तिमन्त आनन्द, विनोदमय विभूति । सन्तके शब्द जन-मनके लिए संगीत और सुगन्ध होते हैं । उनकी वाणीके मर्मका अन्तिम स्वरूप और लक्षण भी अखण्ड विनोद ही है । उस विनोदमय मर्मका सम्यक् ज्ञान ही सन्त-पद-प्राप्तिका रहस्य है । यानी आनन्द ही मंज़िल है और आनन्द ही मार्ग है । यह **सन्त-विनोद** ऐसी ही विनोदमय सन्त-वाणीकी मन्दाकिनी है जो हमारे चित्तको शुद्ध, बुद्ध, संस्कृत और प्रमुदित करती जाती है ।

उच्च संस्कृति दो प्रकारकी है—भद्र संस्कृति और सन्त संस्कृति । पहलीमें नीति-नियमका शासन मान्य होता है, तो दूसरीमें शुद्ध हृदयके अन्तर्नादका । एक प्रणालिकाकी प्रतिष्ठा बढ़ाकर लोगोंको नेकीकी ओर आकर्षित करती है, दूसरी स्पर्शमणिकी तरह हमारे अन्तरंगको स्वर्णिम बनाती है । भद्र-संस्कृति सौन्दर्यका परिचय कराती है; सन्त-संस्कृति सौन्दर्य-रूप बनाती है । शब्दमें छन्द मिल जानेपर शब्दको काव्यत्व प्राप्त होता है, पर शब्दमें तपके मिल जानेपर शब्दमें मन्त्रत्व प्रकट होता है । यह मन्त्रत्व ही परिवर्तक स्पर्शमणि है । यहाँ ऐसे मन्त्रत्व-प्राप्त विनोदको शब्द रूपमें प्रवाहित किया गया है । **सन्त-विनोद** सात्त्विकतासे ओत-प्रोत है; वह मानो मुक्त-हस्त तेजकण बखेरती हुई फुलझड़ी है । प्रकाशका हास्य फैलाते हुए इन तेजकणोंमें-से प्रत्येकमें समग्र पृथ्वीको हिला देनेका अमोघ सामर्थ्य है । यह वह प्रकाश है जिसके लिए मानव युगोंसे स्पष्ट-अस्पष्ट रीतिसे सिर पटकता आया है । उसकी क्वचित् झलकने भी उसे अपनी निगूढ़ गहराइयोंका दर्शन कराकर उसे 'घर आने' के लिए बिह्वल बनाया है; आसमानमें भगवान्‌को ढूँढ़ती हुई नज़रोंको दिलकी तरफ़ झुकाया है ।

वहाँ नया मार्ग दर्शाकर, मानो किसी गुफासे आता हुआ, गहरा नाद उससे कहता है :

एषः तव पन्थाः ।

सन्त-विनोद मानो प्रकाशका जुलूस—'प्रौसेशन ऑफ़ लाइट' है । इसमें एकके बाद एक ज्योतिर्धर आत्मिक शुद्धता और पवित्रताके सादा और सरल जीवनकी सौन्दर्य-ज्योति हाथमे लिये नज़रसे गुजर कर हृदयमे प्रवेश करते जाते हैं ।

आकाशसे पृथ्वीपर खेलने आये हुए कौन हैं ये ज्योतिर्धर सितारे ? ज़रा इनका दर्शन कर लें । अरे, यह तो कालातीत एकको समग्रमे विस्तारनेवाले और समग्रको एकमें समाहित कर लेनेवाले सर्वयुगीन महात्माओंकी क़तार है !—वशिष्ट-विश्वामित्र, व्यास-शुकदेव, कृष्ण-अर्जुन, जनक एवं भीष्मके साथ बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य, श्रीमद्राजचन्द्र, गांधीजी, विनोबा, रवीन्द्रनाथ टागोर, ख़लील जिब्रान, रामकृष्ण परमहंस और रमण महर्षि कृपा बरसा रहे है; सन्त ज्ञानेश्वर, नानक, एकनाथ, नामदेव और तुकारामके साथ सन्त बायजीद, हुसेन, ग़ज़्ज़ाली, मंसूर, हज़रत ग़ौसुल, हाजी मुहम्मद और सादिक़ भी शीतल चाँदनी फैला रहे है । आइन्स्टाइन, रामतीर्थ, विनोदी बर्नार्ड शॉ, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, दयानन्द, रामशास्त्री और रानडे भी इस सन्त-समूहमें गुरु गोविन्द सिह, उड़िया बाबा और रविशंकर महाराजके साथ स्मिति प्रसारित कर रहे है । इनके अलावा तत्त्वज्ञानके अन्य फ़व्वारे—सुक़रात, डायोजिनीज़, कन्फ़्यूशियस और लाओत्से भी क्या इस क़तारमें नहीं हैं ? इन सबके दर्मियान प्रेमदीवानी मीरा और प्रणयमस्त रबिया प्रेमकी एक सर्वांग-सुन्दर संगीत-लहरी बनकर बह रही हैं । अरे, इस सन्त-मालामें तो दूर-दूरके सौदागर, बड़े-बड़े खलीफ़ा, भोज, जेम्स और हारूं रशीद-जैसे बादशाहोंके साथ माइकेल ऐंजेलो-जैसे कलाकार भी शोभायमान हैं; जीवन्मुक्तोंके साथ भक्त और भटकते

भिखारी तक अभिनव रोशनी फेंक रहे हैं। और ख़ूबीकी बात तो यह है कि इस प्रकाश-जुलूसकी पगडंडीपर हिरन, बकरे, हंस, भौरे, कुत्ते, बिल्ली, साँप, मेंढक और गर्दभ तक सन्तवाणीके माध्यम बने हुए हैं !

महज एक सौ अड़तीस पन्नोके लघुपटमें इतने बड़े प्रकाश-जुलूसके विशाल विस्तारको समा लेना कोई मामूली काम नहीं है।

सन्देश ? प्रकाशका सन्देश ? उसे वाचा कैसी ? वहाँ तो झलक होती है और हृदय उसे हृदयंगम कर लेता है। **सन्त-विनोद** की यह विनोद-प्रसादी भी उस झलकको हृदयंगम करनेका आमन्त्रण देती है। सूत्र-शैली-वालोंके लिए तो सन्तोंने सारी हकीक़तको 'श्लोकार्ध' में भी कह दिया है। सत्यका सार तो यहाँ 'आखिरी उपदेश' (पृ० ६८), 'सात अवसर' (पृ० ५७), ' दो दोस्त' (पृ० ७०), 'सुख' (पृ० ८१) और 'दुनिया' (पृ० १३६) पर नजर डालते ही मिल जायेगा। परन्तु ऐसे संक्षिप्त ज्ञानसे ही आनन्दकी पर्याप्ति होती तो 'एकोऽहं बहु स्याम्' की इच्छा ही क्यों जन्मती ? इस सृष्टिकी लीला ही किसलिए होती ? मौन या श्लोकार्ध-द्वारा प्रकटाये हुए परम तत्त्वके रहस्यको ही यहाँ आनन्दलीलाके तौरपर विभिन्न संदर्भोमें, विभिन्न रूपोंमें, उद्घाटित किया गया है। इन्द्रधनुषके समान एक रंगीन ड्रामा इस **सन्त-विनोद** के मंचपर निहारा जा सकता है। यहाँ अनेकानेक तत्त्व जनगण समक्ष हाजिर होते है, अपना अभिनय दिखाते हैं और आखिर अपने महास्वरूपमे विलीन हो जाते हैं।

आइए, अब हम यहाँ झिलमिलाते हुए विषय-तारकोंकी प्रकाश-लिपि समझनेकी कोशिश करें।

सबसे पहले इस सन्तकी सुनिए जो एक श्वानके साथ बैठकर एक ग्रास उसे खिलाता और एक स्वयं खाता जा रहा है—

"तुम क्यों हँसते हो ? विष्णु विष्णुके पास बैठा है, विष्णु विष्णुको खिला रहा है। तुम क्यों हँसते हो विष्णु ? जो कुछ है विष्णु है।" (पृ०–

२५)। साईं बाबा भी कह रहे हैं : "कुत्ते और शूद्र—सबमें—परमात्माका वास है। भगवान् घट-घटमें परिव्याप्त हैं। उन्हें जानो" (पृ० १०३)। सबसे पहला सत्य यह है कि यह जगत् विष्णुमय है। लेकिन जब एक चोर चोरीके अपकृत्यके स्वार्थपूर्ण बचावके लिए उस सत्यका यूँ दुरुपयोग करता है कि 'मैंने तो भगवान्की प्रेरणासे ही, उसकी इच्छासे ही, चोरीकी है,' तो उसे न्यायाधीश "उसी भगवान्की प्रेरणासे" सज़ा देता है (पृ०१३७)। इससे स्पष्ट है कि यह सर्वव्यापी विष्णुतत्त्व निःस्वार्थता, समता, मैत्री और प्रेमके पक्षमें है। स्वार्थ, अहंकार, द्वेष, संकुचितता, चालाकी या ढोंगकी परछाई भी उसे सहन नहीं होती।

हाजी मुहम्मद तो एक बड़े साधु थे। लेकिन एक बार उन्होंने किसी नवागन्तुक धर्म-जिज्ञासुको दिखलानेके लिए ज़्यादा देर तक नमाज़ पढ़ी। इस दिखलावेसे उनकी साठ वर्षोंकी नमाज़का फल नष्ट हो गया (पृ०-११३)। परम सत्यको प्रदर्शनप्रियता लवलेश प्रिय नहीं है। पानीपर चलनेकी सिद्धि चमत्कारपूर्ण हो सकती है, परन्तु उसके लिए किया गया तप, परमात्माके लिए न होनेके कारण, भ्रामक बनकर रह जाता है (पृ० ११७)। छह खण्ड फ़तह करके भरत चक्रवर्ती अपना नाम वृषभाचल पर्वतपर सगर्व लिखने जाता है, लेकिन वहाँ इतने चक्रवर्तियोंके नाम लिखे हुए देखता है कि अपने नामके तीन अक्षर लिखनेकी भी जगह नहीं पाता। इससे उसका सारा गर्व खण्डित हो जाता है (पृ० १२८)। चक्रवर्तियोंके भी अभिमानके साथ सत्यकी ताल नहीं मिलती। मानकी तरह ही क्रोधको भी जीते बगैर भजनका अधिकार नहीं मिलता (पृ०७१)। उसके लिए तो सदा सावधान रहना चाहिए। तभी 'समर्थ' बना जा सकता है (पृ० ८४)। रामके भक्तके लिए सीताके राम-विहीन रत्नजटित हारकी भी क्या क़ीमत है ? (पृ० ४३)। वैराग्यभाव ही परिवर्तक रसायन है :—जम्बुकुमारको भरी जवानीमें अतुल सम्पत्ति और अनुपम सुन्दरी आठ

रानियोंको त्यागते देखकर विद्युच्चर डाकू भी अपने पाँच सौ साथियों समेत साधु बन जाता है (पृ० ४८)।

इस प्रकारकी तीव्र अनासक्ति और वैराग्यके पीछे प्रभुका प्रेम अपना जादू दिखला रहा होता है। और जहाँ प्रेम है वहाँ अद्‌भुत शक्ति प्रकट होती है। देखिए, छह वर्षकी एक लड़की अपनी गोदमें अपने छोटे भाईको लिये पहाड़ीपर चढ़ रही है। कोई पूछता है—"यह लड़का तो तेरे लिए बहुत भारी है!" तो बोली—"बिलकुल भारी नहीं है, यह तो मेरा भाई है" (पृ० ३९)। है न प्रेमका जादू! मीरा तो प्रेम दीवानी थी ही। उसी जैसी प्रेमोन्मादिनी थी रबिया। उससे पैग़म्बर पूछते हैं: 'रबिया, तू मुझसे प्रेम करती है?' और वह मदमाती जवाब देती है: 'ओ खुदाके पैग़म्बर, आपसे कौन प्रेम नहीं करता? लेकिन मैं ईश-प्रेममे इतनी सरशार रहती हूँ कि किसी औरकी मुहब्बतके लिए गुंजाइश ही कहाँ?' (पृ० ४५)। सुक़रातको प्रेमपर बोलता सुनिए—"प्रेम ईश्वरीय सौन्दर्यकी भूख है, प्रेमी प्रेमके द्वारा अमरत्वकी तरफ़ बढ़ता है, विद्या, पुण्य, यश, उत्साह, शौर्य, न्याय, श्रद्धा और विश्वास ये सब उस सौन्दर्यके ही रूप हैं। आत्मिक सौन्दर्य ही परम सत्य है। और सत्य वह मार्ग है जो परमेश्वर तक पहुँचा देता है" (पृ० १०६)। अफ़लातून इस व्याख्याको सुनकर सुक़रातका दीवाना हो गया। ऐसे उत्कट प्रेमसे प्रेरित व्यक्तिको कोई त्याग करते वक़्त न तो कोई तैयारी करनी पड़ती है न कोई दुःख होता है (पृ० १४)। ऐसी सच्ची प्रेम दृष्टिको क्रियाकाण्ड (formalities) की परवा नहीं होती। इसीलिए नामदेवने भगवान्‌के अभिषेक-जलको प्यासे गधेको पिला दिया! जिसके हृदयमें दयाभाव और सहानुभूति नहीं है उसे अभिषेकसे क्या मिलनेवाला है? सहानुभूतिपूर्ण प्रेम ही स्वपर-कल्याणकारी होता है। वृक्षकी छाल उतारनेमें क्या दुःख होता है यह जाननेके लिए अपनी चमड़ी उतारकर देखनेवाला नामू, इस उत्कट सहानुभूतिके प्रतापसे, सन्त नामदेव हो जाता

है (पृ० १०९)। पुत्र कार्तिकेय-द्वारा बिल्लीके शरीरपर की हुई लकीरका माता पार्वतीके गालपर उभर आना भी सर्वव्यापी जगदम्बाकी अनन्त सहानुभूतिका ही द्योतक है (पृ० २४)।

जो बिल्लीका बदन है वही माताका गाल है; जो वृक्षकी छाल है वही अपनी चमड़ी है; जिस भगवान्‌के अभिषेकके लिए त्रिवेणी-जल सुरक्षित रखा है वह भगवान् ही प्याससे तड़पता हुआ गर्दभ है; भूखा कुत्ता और शूद्र ही स्वयं साई बाबा है (पृ० १०२)। ऐसी समतायुक्त दृष्टि-द्वारा ही सहानुभूति विकसित होती है, प्रेम प्रकट होता है और उसकी मस्ती रोम-रोममें व्याप्त हो जाती है। और तब तो आत्मानन्दके 'घीके लोटे' के सामने देह-सुखका 'छाछका लोटा' तुच्छ लगने लगता है (पृ० २०)। हाथ फैलाकर प्रभुसे भिक्षा माँगता हुआ सम्राट् भी तब एक भिखारीको भी अपने जैसा भिखारी ही प्रतीत होता है (पृ० १२)। यह समता तो ठीक ही है, परन्तु साधुसे तो एक और दिव्यतर समताकी अपेक्षा रखी जाती है—उसके लिए 'मिला तो खा लिया, न मिला तो सन्तोष कर लिया' इतना ही काफ़ी नहीं है, बल्कि यह कि 'मिला तो बाँटकर खाया, न मिला तो उसे तपस्याका अवसर बना दिया' (पृ० ११३)।

पर ऐसी शुद्ध बुद्धि आवे कैसे ? भीष्म-जैसी हस्तीकी भी बुद्धिकी शुद्धि तब हुई जब दुर्योधनके अन्नसे बना हुआ तमाम दूषित रक्त अर्जुनके बाणों-द्वारा निकल गया (पृष्ट ७८)। गुबरीला जबतक अपने गलेमे ठुसी हुई मलकी घुंडीको उगल नहीं देता तबतक उसे फूलोंकी ख़ुशबू आ कैसे सकती है ? (पृ० २२)। सत्संगकी पवित्रताके संस्पर्शसे अशुद्धता और क्षुद्रताके दूर हो जानेपर मनुष्यको प्रकाश और विशालता प्राप्त होती है। तब वह प्रभुका बनता है, प्रभुमय बनता है और उसका संगीत प्रभुके लिए प्रयोजित होता है जिसकी बदौलत हरिदासोंके गलोंमें ऐसा अनुपम माधुर्य प्रकट होता है जो बादशाहोंके लिए गानेवाले तानसेनोंको कभी नसीब नहीं हो सकता (पृ० १२)।

श्री नारायणप्रसादजीने, जो कि इससे पूर्व **ज्ञानगंगा** की दो धाराएँ प्रवाहित कर चुके हैं, ऐसे परम प्रेमानन्दकी मस्तीका विविधरंगी दर्शन इस **सन्तविनोद**में कराया है। 'त्रिष्णुमय जगत्' (पृ० २५) में ब्रह्ममय जगत्की और 'मायावी संसार' (पृ० ९१) की रूपकथा-द्वारा भ्रममय जगत्की छबि दिखलाकर उसकी बन्धनमूलक अर्वाचीन सभ्यताके भी दर्शन कराये हैं (पृ० ९२) और यूँ मुक्तात्माओंके मुक्तानन्दको यहाँ मुक्त रूपसे प्रवाहित किया है और साथ ही खलील जिब्रानके इस महान् वचनको सार्थक कर दिखाया है कि—

"The fresh song comes not through bars and wires"

जनमुख निवास,
कांदीवली, बम्बई

—(आचार्य) चिमन भाई दवे

विषय-क्रम

उम्र	९	इब्राहीम	२१
सावधान !	९	तोशा	२२
सुरक्षा	१०	समता	२२
अक्रोध	१०	दोष-दर्शन	२३
सुलतान	११	आनन्द-प्राप्ति	२३
संगीत	१२	मातृ-दृष्टि	२४
भिखारी	१२	उसकी हँसी	२४
प्रजा-सेवक	१३	विष्णुमय जगत्	२५
धोखेबाज़ी	१३	याचना	२५
लंगोटी	१४	निन्दा	२६
वैराग्य	१४	जानकार	२६
शोभा	१५	स्वधर्म-परधर्म	२६
क्रोध	१६	सेज	२७
कुसंग	१६	साधुता	२८
दुनिया	१६	अशोभन	२८
पर-दुःख	१७	कपटी	२९
दया	१८	मूर्ख शिष्य	२९
रिश्तेदार	१८	रामनामकी शक्ति	२९
बापूकी उदारता	२०	अभेद	३०
कल्याण	२०	सन्त तुकाराम	३०
हज़रत अली	२१	बुलन्दी	३१

कृष्णकी पसन्द	३१
नमककी गुड़िया	३१
अपरम्पार लीला	३२
शिक्षण	३२
धर्मवेशी लुटेरे	३२
भक्त	३३
रावणकी रामभक्ति	३४
गुरु गोविन्दसिंह	३४
आज़ादी	३५
स्वात्माभिमान	३५
अमरता	३६
याद	३६
भावना	३६
बड़ी मार पड़ेगी !	३७
तीसरे महायुद्धके बाद	३७
अहिंसा	३८
शान्ति चाहिए तो फिर लड़ते क्यों हैं ?	३८
साधुओंकी उदारता	३९
प्यार	३९
जंगख़ोर	४०
आनन्दका रहस्य	४०
मान-दान	४१
महान् कौन ?	४१
पापी कौन ?	४२
ताक़त	४२
दान	४३
भौतिक सम्पत्ति	४३
दृष्टि	४४
माँका हृदय	४४
मन्त्री-पद	४५
काम	४५
ईश-प्रेम	४५
धरती	४६
भक्त राँका-बाँका	४६
हज़रत ग़ौसुल	४७
विद्युच्चर	४८
सन्त सादिक़	५०
मज़हबी झगड़ा	५१
समदर्शन	५२
अहंकार	५२
हक़की रोटी	५२
सच्चा ज्ञानी	५३
भय	५४
सहनशीलता	५४
प्रार्थना	५५
जैसी भावना वैसी सिद्धि	५५
वेतन-वृद्धि	५५
यश-तृष्णा	५६
आनन्द	५७
सात अवसर	५७
सूफ़ी सन्त ग़ज़ाली	५८

दावत	५९
वर्षण	६०
साधना	६०
कैसी गुज़री ?	६०
ब्रह्मर्षि	६०
उसको दे मौला	६१
निर्माता	६२
पागल	६३
कपड़े	६४
ज्ञान और अर्द्ध-ज्ञान	६४
शेरकी बेटी	६५
न्यायाधीश	६७
उपाधियाँ	६८
आख़िरी उपदेश	६८
भूखा भगवान्	६९
अज्ञात सेवा	६९
विशाल दृष्टि	७०
दो दोस्त	७०
एकान्त और एकाग्रता	७१
लात	७१
भजनका अधिकार	७१
आनन्दका मूल्य	७३
नास्तिक	७४
तीसरा विश्वयुद्ध	७४
कौन जीता ?	७४
वैराग्य	७५
आश्चर्य	७७
कल	७७
गुण-दर्शन	७७
अधिकार	७८
अन्नका असर	७८
चमार	७९
कमी	७९
मध्यम मार्ग	८०
समझौता	८१
सुख	८१
गाली	८२
निज-बल	८३
सर्वव्यापक	८३
सावधान	८४
अहंकार	८४
क्षमा	८५
संकीर्ण दृष्टि	८६
गर्व-खर्व	८६
संगीन जुर्म	८७
मतिमन्द	८७
स्वघात	८८
जैण्टिलमैन !	८९
ज़िन्दगीकी प्याली	९०
मानव-तन	९०
मायावी संसार	९१
सभ्यता	९२

सबसे दुःखी प्राणी ९२
दयाभाव ९३
साधना ९३
सन्त ज्ञानेश्वर ९३
सबमें भगवान् ९४
अमर जीवन ९५
फूट ९५
दोस्त ९६
दयामयी ९७
स्वावलम्बन ९७
स्वामी दयानन्द ९८
जीवन-चरित ९९
सहनशीलता ९९
रामचरित-मानस १००
मैं खून नहीं पी सकता ! १००
क्षमा-दान १०१
घट-घटवासी १०२
नर्तकी १०३
बाहुबलि १०४
लीला १०५
प्रेम १०६
गर्व १०७
सभ्यता १०८
पवित्र अन्न १०८
नामदेव १०९
एकनाथ ११०
अन्त ११०
महल १११
नम्रता ११२
दुःख ११२
ग़नीमत ११३
साधु ११३
मुझे देखो ! ११३
सेवक ११४
भक्त ११५
आचरण ११५
असाधु ११६
सिद्धि ११७
नींद ११७
बलि ११७
ईश-प्राप्ति ११८
चोर ११८
भजनका वज़न ! ११९
बहुमत १२०
आज़ादी १२१
भावना १२२
संगति १२२
वीर १२३
शान्ति और अशान्ति १२३
कल्पना १२४
उद्धार १२४
शम्स तबरेज़ १२५

चाँदी	१२५
महँगे भोग	१२६
वाग्भट	१२६
तोहफ़ा	१२७
शान्ति	१२७
मजनूँ	१२७
मौत	१२७
अहंकार	१२८
दीक्षा	१२८
सेवा	१२९
पाठ	१२९
नासिरुद्दीन	१३०
हरीच्छा	१३०
कच्चा-पक्का	१३१
सबका ईश्वर एक	१३२
भ्रम	१३३
भगवान्के भगवान्	१३४
सुखी कौन ?	१३४
द्रौपदी	१३५
दुनिया	१३६
दुनियाका सुख	१३६
खोटा वेदान्त	१३७
चिन्ता	१३८

सन्त-विनोद

●

उम्र

किसीने संत वायजीदसे पूछा—'आपकी उम्र क्या है ?'

आपने जवाब दिया—'चार साल।'

वह आदमी चुप हो गया। वायजीदने समझाया—'मेरी जिन्दगीके सत्तर साल दुनियवी प्रपंचमें गुजर गये। सिर्फ़ चार बरससे उस प्रभुकी तरफ़ देख रहा हूँ। ज़िन्दगीका जितना वक़्त उसके नज़दीक बीता है वही जीवन-काल है।'

सावधान !

संत हुसेनने एक बदमस्त शराबीसे कहा—

'भाई ! क़दम सँभाल-सँभाल कर रक्खो, वर्ना गिर जाओगे।'

शराबी बोला—'मुझे क्या, आप अपनेको समझाइए। सब जानते हैं कि मैं पीता हूँ और बेख़बर भी हो जाता हूँ। गिर जाऊँगा तो नहाकर साफ़ हो जाऊँगा। मगर कहीं आपके पैर डगमगाये तो आप कहीं के नहीं रहेंगे !'

सुनकर हुसेन सावधान हो गये।

सुरक्षा

एक सौदागरके पास बड़ी ही ख़ूबसूरत दासी थी। एक बार उसे बाहर दौरेपर जाना था। पर यह नहीं तय कर पा रहा था कि दासीको किसके यहाँ छोड़ जाय। एक सज्जनने मशवरा दिया कि उसे सन्त यूसुफ़के पास छोड़ जाय।

जब वह सन्त यूसुफ़के नगर पहुँचा तो उसने वहाँके निवासियोंसे उनके चरित्रके ख़िलाफ़ बहुत-सी बातें सुनीं। इसलिए वह निराश होकर अपने गाँव लौट आया। पर उसी सज्जनने सन्त यूसुफ़के निर्मल आचरणकी तारीफ़ करके उन्हे ही सर्वोत्तम व्यक्ति बतलाया। लाचार वह फिर वहीं पहुँचा। लोगोंने सन्तकी निन्दा करके उसे फिर बरग़लाया। मगर वह दृढ़ता पूर्वक सन्तकी कुटियापर जा पहुँचा। वहाँ उनसे धर्मोपदेश सुनकर वह बड़ा प्रभावित हुआ। बोला—'आपका ज्ञान-वैराग्य विलक्षण है, मगर आप यह बोतल और प्याला क्यों रखते हैं? इनसे लोग आपके शराबी होनेकी कल्पना करके बदनामी करते हैं।'

यूसुफ़ने कहा—'मेरे पास पानीके लिए कोई बरतन नहीं था, इसलिए यह बोतल और प्याला रख लिया है।'

'पर बदनामी तो इसीसे होती है!'

'इसीलिए तो मैंने यह बोतल और प्याला रख छोड़ा है। बदनामी-की वजहसे ही कोई मेरे पास नहीं आता। बेफ़िक्रीसे खुदाकी इबादतमें लगा रहता हूँ। अगर मैं मशहूर हो जाऊँ तो मेरे पास कोई सौदागर अपनी सुन्दर दासी न रख दे? देखा, कितने फ़ायदेमें हूँ!'

अक्रोध

एक बार किसी गृहस्थके यहाँ एक स्याहपोश अतिथि आया।

गृहस्थने नाखुशीसे पूछा—'तुमने ये काले कपड़े क्यों पहन रक्खे हैं?'

'मेरे काम, क्रोध आदि मित्रोंकी मृत्यु हो गई है। उन्हींके शोकमें ये काले वस्त्र धारण किये हैं,' अतिथिने जवाब दिया।

गृहस्थने अपने नौकरको हुक्म दिया कि इस अतिथिको घरसे बाहर निकाल दो। नौकरने फ़ौरन् आज्ञाका पालन किया।

थोड़ी देर बाद उसने अतिथिको वापस बुलवाया। मगर पास आने-पर फिर निकलवा दिया। इस तरह सत्तर बार अपमान करके उसे निकलवाया। लेकिन अतिथिकी शक्लपर गुस्से या रंजकी कोई अलामत नमूदार नहीं हुई।

अन्तमें गृहस्थने अतिथिकी वन्दना की, और विनयपूर्वक कहा—'आप सचमुच क्षमावान् हैं। मैंने आपको गुस्सा दिलानेकी बहुत कोशिशें कीं, मगर आप बिल्कुल शान्त रहे। आपने सचमुच क्रोधपर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली है........।'

अतिथि बोला—'बस करो, बस करो। ज़्यादा तारीफ़ न करो। मुझसे ज़्यादा क्षमाशील तो कुत्ते होते हैं जो हज़ारों बार बुलाने और दुत्कारनेपर भी बराबर आते-जाते रहते हैं। कुत्ते भी जिसका पालन कर सकें उसमें प्रशंसाकी कौन-सी बात है?'

सुलतान

बादशाह बननेके बाद किसीने हसनसे पूछा—'आपके पास न तो काफ़ी धन था न सेना, फिर आप सुलतान कैसे हो गये?'

हसनने जवाब दिया—'मित्रोंके प्रति सच्चा प्रेम, शत्रुके प्रति भी उदारता और हर एकके प्रति सद्भाव क्या सुलतान बननेकेलिए काफ़ी नहीं है?'

संगीत

अकबर तानसेनके गुरु श्री हरिदासका गाना सुननेके लिए बड़ा उत्सुक था, लेकिन उनके दिल्ली आनेकी उम्मीद तो थी ही नहीं और न यह उम्मीद थी कि वृन्दावनमें भी वह अकबरके सामने गायेंगे। तानसेनने एक रास्ता निकाला, बादशाह साधारण वेशमें वृन्दावन पहुँचे और हरिदासजीकी कुटियाके बाहर छिपकर बैठ गये। तानसेन अन्दर जाकर अपने गुरुके सामने गाने लगे। तानसेनने गानेमें कहीं जानबूझकर भूल कर दी। शिष्यकी भूल सुधारनेके लिए हरिदास गाने लगे। इस तरह सम्राट् अकबर-की इच्छा पूरी हुई।

उसके बाद एक बार दिल्लीमें तानसेनके गानेपर अकबरने कहा—'तानसेन, तुम अपने गुरुके समान क्यों नहीं गा सकते ? उनका स्वर-सौन्दर्य तो कुछ और ही था !'

तानसेन नम्रतापूर्वक बोले—'जहाँपनाह ! इसकी वजह यह है कि मैं हिन्दुस्तानके बादशाहके लिए गाता हूँ और वे गाते हैं सारी दुनियाके मालिकके लिए।'

भिखारी

एक फ़क़ीर बादशाह अकबरके पास आया। देखा कि नमाज़के बाद बादशाह दुआ माँग रहा है—'या खुदा ! मुझपर रहम कर। मेरा खज़ाना भरा रहे.......।' फ़क़ीर यह सुनकर चल पड़ा। तभी बादशाह की दुआ ख़त्म हुई, उसने लौटते हुए फ़क़ीरको बुलवाया और आकर यूँ ही चल देनेकी वजह पूछी। फ़कीर बोला—

'मैं तुझसे कुछ माँगने आया था। मगर देखता हूँ कि तू भी किसीसे मगाँता है। जिससे तू माँगता है उसीसे मै भी माँग लूँगा। तुझ भिखारीसे क्या लूँ ?'

प्रजा-सेवक

बग़दादका एक ख़लीफ़ा राज-कार्य और प्रजाकी सेवाके बदलेमें हर रोज़ शामको सिर्फ़ तीन दिरम ले लिया करता था। हालाँकि और राज-कर्मचारियोंका वेतन इससे कहीं ज़्यादा था, मगर ख़लीफ़ा अपने लिए तीन दिरम ही काफ़ी समझते थे।

एक बार उनकी बेगमने उनसे प्रार्थना की—'अगर आप मुझे तीन दिनकी तनख़्वाह पेशगी दे दें तो मैं ईदपर बच्चोंके लिए नये कपड़े बना लूँ।'

ख़लीफ़ा बोले—'अगर मैं तीन दिन जीता न रहा तो यह क़र्जा कौन चुकायेगा? तुम ख़ुदासे मेरी ज़िन्दगीके तीन दिनका पट्टा ला दो तो मैं ख़ज़ानेसे तीन दिनकी तनख़्वाह पेशगी उठा लूँ।'

धोखेबाज़ी

नावेर नामक एक अरब सज्जनके पास एक बढ़िया घोड़ा था। दाहर नामके एक आदमीने उन्हें कई ऊँट देकर बदलेमें घोड़ा लेना चाहा, लेकिन नावेरको वह घोड़ा बहुत प्यारा था, इसलिए उन्होंने उसे देनेसे इनकार कर दिया। दाहरके मन घोड़ा बहुत चढ़ गया था, इसलिए उसने उसे हथियानेकी एक तरकीब सोची। वह रोगी फ़क़ीरका भेस बनाकर नावेरके रास्तेमें बैठ गया। जब नावेर अपने घोड़ेपर सवार होकर उधरसे गुज़रे तो उन्हें फ़क़ीरकी हालतपर दया आई। अगले गाँव तकके लिए उसे घोड़ेपर चढ़ जाने दिया और ख़ुद पैदल चलने लगे। घोड़ेपर सवार होते ही दाहरने चाबुक मार कर घोड़ेको दौड़ाते हुए कहा—'तुमने ख़ुशीसे घोड़ा नहीं दिया तो मैंने चतुराईसे ले लिया!'

नावेरने पुकार कर उससे कहा—'ख़ुदाकी मर्ज़ीसे तुमने मेरा घोड़ा इस तरह ले लिया है तो जाओ ले जाओ। इसकी ख़ूब सार-सँभाल

रखना। पर अपनी इस धोखेबाज़ीकी बात किसीसे न कहना। वर्ना लोग ज़रूरतसे ज़्यादा चौकन्ने हो जायेंगे और ज़रूरतमन्दोंकी मदद करनेमें हिचकने लगेंगे और इससे बहुत-से दीन-दुखियोंको मदद न मिल पायेगी।'

नावेरकी इस बातसे वह बहुत शर्माया और उसी वक़्त लौट कर उन्हें घोड़ा लौटा दिया और उनसे सदाके लिए दोस्ती कर ली।

लंगोटी

कस्तूरबाने किसी गाँवमें किसान औरतोंको रोज अपने कपड़े धोने और सफ़ाई रखनेका उपदेश दिया। एक ग़रीब किसानकी औरत, जिसके कपड़े निहायत गंदे थे, कस्तूरबाको अपनी झोंपड़ीमें ले गई और बोली—'माताजी, देखिए मेरे घरमें कुछ नहीं है। बस, मेरी देहपर यह एक ही धोती है। अब आप ही बताइए मैं क्या पहनकर इसे धोऊँ ?'

कस्तूरबाने इसका ज़िक्र गांधीजीसे किया। उनपर इसका बड़ा प्रभाव पड़ा। बोले—'इस तरहकी तो देशमें लाखों बहनें होंगी। जब उनके पास तन ढकनेको कपड़े नहीं हैं तो फिर मुझे कुर्ता, धोती, चादर रखनेका क्या हक़ है ?'

बस, तभीसे उन्होंने सिर्फ़ लंगोटी पहननी शुरू कर दी।

वैराग्य

एक स्त्रीको मालूम हुआ कि उसका भाई कुछ दिनों बाद दीक्षा ले लेना चाहता है, इसलिए वह अपनी सम्पत्तिकी व्यवस्था करनेमें लगा हुआ है। उसने अत्यन्त चिन्तित होकर पतिको यह हाल सुनाया।

पति हँसकर बोला—'फ़िक्र न करो, तुम्हारा भाई दीक्षा नहीं लेगा।'

स्त्री बोली—'आप तो हँसते हैं, मुझे यह रंज खाये जा रहा है कि उसके चले जानेपर उसकी कच्ची गृहस्थीका क्या होगा !'

पति—'भई ! त्याग-वैराग्यकी लम्बी तैयारी नहीं करनी पड़ती, वह तो सहज और एकदम होता है । देख ! इस तरह—' यह कहते हुए वह सब कुछ छोड़कर सीधा वनको चला गया और फिर कभी न लौटा ।

शोभा

रामशास्त्री पेशवा माधवरावके गुरु थे, मंत्री थे और राज्यके प्रधान न्यायाधीश थे । फिर भी निहायत सादगीसे एक मामूली घरमें रहते थे ।

किसी पर्वके समय उनकी पत्नी राजभवनमें गई । उनकी अत्यन्त साधारण वेशभूषा देखकर रानी चकित रह गई । रानीने उन्हें बेशक़ीमती कपड़े और रत्नजटित गहने पहनाये ।

विदाके वक़्त उन्हें पालकीमें भेजा । पालकी रामशास्त्रीके घर पहुँची । कहारोंने दरवाज़ा खटखटाया । द्वार खुला और फ़ौरन् बन्द हो गया । कहार बोले—'शास्त्रीजी, आपकी धर्मपत्नी आई हैं, दरवाज़ा खोलिए ।'

शास्त्रीजी बोले—'वस्त्राभूषणोंसे सजी हुई ये कोई और देवी हैं । मेरी ब्राह्मणी ऐसे कपड़े और गहने नहीं पहन सकती । तुम लोग भूलसे यहाँ चले आये हो ।'

शास्त्रीजीकी पत्नी अपने पतिदेवके स्वभावको जानती थीं । उन्होंने कहारोंसे लौट चलनेके लिए कहा । रनवासमें आकर रानीसे कहा—'इन वस्त्र और आभूषणोंने तो मेरे घरका ही द्वार मेरे लिए बन्द करा दिया !'

सब कपड़े, गहने उतारकर और अपनी साड़ी पहनकर पैदल घर लौटीं ।

शास्त्रीजी बोले—'कीमती गहने और कपड़े या तो राजपुरुष शोभाके लिए पहनते हैं या मूर्ख अपनी मूर्खता छिपानेके लिए पहनते हैं । सत्पुरुषों-की शोभा तो सादगीसे ही है ।'

यह कहकर गुरुजीने एक कोड़ा लिया और राजकुमारकी पीठपर सड़ाक-सड़ाक दो जड़ दिये और बोले—'जाओ वत्स,तुम्हारा कल्याण हो।'

राजाने आचार्यसे पूछा—'अपराध क्षमा हो, मगर राजकुमारका यह ताड़न मेरी समझमे नहीं आया, गुरुदेव।'

गुरु बोले—'इसे शासक बनना है। दूसरोंको दंड भी देगा। इसे मालूम होना चाहिए कि मारकी तकलीफ़ कैसी होती है।'

दया

एक आदमी किसी जंगलमेंसे जा रहा था। वहाँ उसे एक हिरनी और उसका बच्चा दिखाई दिया। वह उनके पीछे पड़ा। हिरनी तो भाग गई, पर बच्चा पकड़ लिया गया। वह उसे लेकर चला। हिरनी भी आकर ममता वश रोती हुई उसके पीछे-पीछे चलने लगी। आदमीको दया आ गई; उसने बच्चेको छोड़ दिया। बच्चा छूटते ही छलांग मारता हुआ माँके पास पहुँचा। हिरनी मूक आशीर्वाद देती हुई ख़ुशी-ख़ुशी बच्चेके साथ लौट आई।

रातको उस आदमीने सपनेमें देखा—कोई उससे कह रहा है, 'इस दयाके लिए तुम्हें बादशाही मिलेगी।' वह आगे चलकर ग़ज़नीका बादशाह हुआ।

रिश्तेदार

एक महात्माने एक सत्संगी युवकको समझाया—'केवल परमात्मा ही अपना है। दुनियामें और कोई किसीका नहीं। माँ-बापकी सेवा और बीबी-बच्चोंका पालन-पोषण कर्तव्य समझकर करना चाहिए। मगर मोहवश उनमें आसक्ति रखना उचित नहीं।'

युवक बोला—'परन्तु भगवन् ! मेरे माता-पिता मुझे इतना स्नेह करते हैं कि एक दिन घर न जाऊँ तो उनकी भूख-प्यास उड़ जाती है, नींद हराम हो जाती है। और मेरी पत्नी तो मेरे बग़ैर ज़िन्दा ही नहीं रह सकती।

महात्माने उसे परीक्षा करके देखनेकी युक्ति बतलाई।

वह घर जाकर पलंगपर चुपचाप लेट गया। प्राणवायु मस्तकमें चढ़ाकर वह निश्चेष्ट हो गया। घरवाले उसे मरा समझकर रोने-पीटने लगे। लोग जमा हो गये।

उसी समय महात्माजी आ पहुँचे। उन्होंने कहा—'मैं इसे ज़िन्दा कर सकता हूँ। एक कटोरी पानी लाओ।'

घरके लोग साधुके चरणोंमें लोटने लगे। पानी लेकर महात्माजीने कुछ मंत्र पढ़े और कटोरीको युवकके ऊपर घुमाकर बोले—'अब इस पानीको कोई पी जाय। पीनेवाला मर जायेगा और युवक जी जायेगा।'

मरे कौन ? सब एक दूसरेका मुँह देखने लगे। पड़ोसी और दोस्त वग़ैरह धीरे-धीरे खिसक गये।

पिता, माता और पत्नीने लम्बे-चौड़े बहाने बना दिये। 'तो मैं पी लूँ यह पानी ?' साधुने पूछा।

सब घरवाले बोल उठे—'आप धन्य हैं। महात्माओंका जीवन तो परोपकारके लिए ही होता है। आप कृपा करें। आप तो मुक्तात्मा हैं। आपके लिए तो जीवन-मरण समान है।'

युवकको अब कुछ देखना-सुनना नहीं था। उसने प्राणायाम समाप्त कर दिया। बोला—'भगवन् ! आपके लिए पानी पीना ज़रूरी नहीं है। आपने आज मुँझे सचमुच जीवन दे दिया है—प्रबुद्ध जीवन।'

बापूकी उदारता

चम्पारनके एक गाँवमें एक दिन देवीकी भेटके लिए एक बकरेको फूल-मालाओंसे सजाकर जुलूसमें निकाला जा रहा था। भाग्यसे उस रोज़ गांधीजी भी उसी गाँवमें थे। जब जुलूस गांधीजीके निवास-स्थानके पाससे गुजरा तो गांधीजी कुतूहलवश देखने बाहर निकले। यह सब देखकर पूछने लगे—

'इस बकरेको क्यों लाये हो ?'

'देवीको भोग चढ़ाने।'

'देवीको बकरेका भोग क्यों चढ़ाते हो ?'

'देवीको प्रसन्न करनेके लिए।'

'बकरेसे आदमी अच्छा है न ?'

'हाँ जी।'

'तो अगर हम आदमीका भोग चढ़ायेंगे तो देवी ज़्यादा खुश होगी न ? है कोई आप लोगोंमें देवीको प्रसन्न करनेके लिए तैयार ? अगर कोई न हो तो मैं तैयार हूँ !'

लोग एक दूसरेके मुँहकी तरफ़ देखने लगे ! क्या जवाब दें कुछ सूझ नहीं पड़ रहा था।

गांधीजी अपना दुख दिखलाते हुए बोले—'बेज़बान प्राणीके खूनसे देवी खुश नहीं होती। ऐसे अधर्मसे तो वो नाराज़ होती है। उसे प्रसन्न करना हो तो सच्चाईपर चलो, सब प्राणियोंपर दया दिखलाओ। इस बकरेको छोड़ दो। देवी तुमपर पहलेसे ज़्यादा खुश होगी।'

इसका चमत्कारिक असर हुआ। लोग बकरेको छोड़कर चल दिये।

कल्याण

श्रीमद् राजचन्द्र—'अगर तुम एक हाथमें घीका भरा लोटा और दूसरे हाथमें छाछका भरा लोटा लिये जा रहे हो और रास्तेमें किसीका धक्का लगे तो तुम किस लोटेको सँभालोगे ?'

मुमुक्षु—'घीका लोटा ही सँभालेंगे !'

श्रीमद्—'यह देह छाछकी तरह है, इसे आदमी सँभालता है; आत्मा घीकी तरह है, पर उसे गिरने देता है। ऐसा नादान यह इन्सान है !'

हज़रत अली

ख़लीफ़ा हज़रत अली राजकीय काग़ज़ात देख रहे थे, कि कुछ सरदार उनसे निजी कार्यके लिए मिलने आये।

हज़रत अली जिस चिराग़की रोशनीमें काम कर रहे थे उसे बुझाकर और दूसरा जलाकर उनसे बात करने लगे। सरदारोंकी बातें ख़त्म होनेपर वे दूसरे चिराग़को बुझाकर और पहलेको जलाकर फिर कार्यव्यस्त हो गये।

सरदारोंने यह माजरा देखा तो अपना कुतूहल न रोक सके। हजरतसे इसका कारण पूछा। ख़लीफ़ा बोले—'जब तुम आये मैं सरकारी काम कर रहा था। लेकिन निजी बातोंमें सरकारी तेल कैसे जलाया जा सकता है ?'

इब्राहीम

एक रईसके यहाँ कुछ प्रतिष्ठित महमान आये। रईसने अपने बाग़के रखवाले इब्राहीमको कुछ बढ़िया फल तोड़कर लानेका हुक्म दिया। मगर खाते वक़्त मालूम हुआ कि उनमेसे अधिकांश फल खट्टे हैं। मालिकने इब्राहीमको झिड़कते हुए कहा—'तू ऐसे खट्टे फल कैसे ले आया। इतने दिनोंसे बाग़में रहता है तुझे यह भी नहीं मालूम कि मीठे फल कौन-से है !'

इब्राहीम—'हुजूर, मैं तो आपके बाग़की रखवालीके लिए रक्खा गया हूँ। मुझे यह कैसे मालूम हो कि कौन-से फल मीठे हैं, कौन-से खट्टे ?'

ये ही इब्राहीम आगे चलकर मुसलमानोंके एक महान् सन्त हुए।

तोशा

एक भौंरा किसी गुबरीलेसे बोला—

'तुम देखनेमें मुझ जैसे लगते हो, तुम्हें गोबरका आहार-विहार करते देख मुझे कष्ट होता है। मेरे बाग़में चलो। वहाँ फूलोंकी खुशबूसे तुम्हारा दिमाग़ मुअत्तर हो जायगा। फिर तुम इस गोबरकी दुनियाका कभी नाम भी न लोगे। इस नरकको छोड़ो। चलो, मैं तुम्हें अपने स्वर्गमें ले चलूँ।'

गुबरीला सशंक होकर बोला—'ना भाई! इस मोहनभोगसे बढ़कर भी क्या कहीं कोई दिव्यतर पदार्थ हो सकता है? मुझे बेवक़ूफ़ न बनाओ। जाओ अपना काम देखो।'

भौंरेने करुणावश उससे बहुत अनुरोध किया। आखिर गुबरीला रज़ामन्द हो गया। उसने तोशा लिया; और यह सोचकर कि गुलशन पसन्द तो क्या आनेवाला है आख़िर लौट तो आना ही है, भौंरेके साथ हो लिया।

भौंरेने अपने पुष्पोद्यानमें पहुँचकर रंग-बिरंगे, सुन्दर-सुन्दर, तरह-तरहकी खुशबूवाले फूलोंकी सैर कराई। मगर गुबरीलेका उदास चेहरा प्रसन्न न हुआ।

भौंरेको इसकी वजह समझते देर न लगी। आख़िर बोला—'भाई! तुमने अपने गलेमें जो गोबरकी घुंडी दबा रक्खी है, पहले उसे उगल दो; तभी फूलोंकी खुशबू ले सकोगे।'

समता

एक आदमी सन्त मेकेरियसके पास आकर विनयपूर्वक बोला—'महा-राज, मुझे मुक्तिका मार्ग बताइए।'

सन्त—'क़बरिस्तानमें जा और सब क़बरोंको गाली देकर आ।'

आदमीने वैसा ही किया। दूसरे दिन सन्तने उसे सब क़बरोंकी स्तुति कर आनेके लिए कहा। आदमीने इस आज्ञाका भी पालन किया। तब सन्तने उससे पूछा— 'किसीने तेरी गाली या स्तुतिके जबाबमें कुछ कहा ?'

'किसीने कुछ नहीं भगवन् !'

'तू मरणशील भी सब लोगोंके बीच मान-अपमानसे अलिप्त रह। यही मुक्तिमार्ग है।'—सन्त बोले।

दोष-दर्शन

गांधीजीके किसी आश्रमवासीसे कभी कोई दुराचार हो गया। किसी दूसरेने इसकी शिकायत गुमनाम पत्र लिखकर गांधीजीसे की।

उस दिन प्रार्थनाके बाद गांधीजी गम्भीर होकर बोले—'एक तो ऐसे विषयमें गुमनाम ख़त लिखना ग़लत है। दोयम, किसीके पापकी ओर अंगुली उठाते वक़्त याद रखना चाहिए कि बाक़ीकी तीन अंगुलियाँ अपने दिलकी तरफ़ होती हैं।'

आनन्द-प्राप्ति

एक धनिक अमेरिकन स्त्री स्वामी रामतीर्थके पास आकर बोली—'महाराज ! मेरा इकलौता बेटा मर गया है। मैं घोर दुखी रहती हूँ। कृपया मुझे आनन्द-प्राप्तिका मार्ग बताइए।'

स्वामी राम—'आनन्द मिल जायेगा, मगर तुम्हे उसकी क़ीमत अदा करनी पड़ेगी।'

स्त्री—'पैसेकी मेरे पास कमी नहीं। आप जो क़ीमत कहें मैं अदा करनेको तैयार हूँ।'

स्वामी—'बाई ! आनन्दके राज्यमें सोने-चाँदीके सिक्के नहीं चलते ।' यह कहते हुए स्वामीजीने उसे एक हठी अनाथ बालक देते हुए कहा—'लो इसे अपने पुत्रकी तरह पालना ।'

बाई—'यह तो बड़ा मुश्किल काम है । मुझसे यह न हो सकेगा ।'

स्वामीजो—'तो आनन्द पाना भी बड़ा मुश्किल है । मैं तुम्हें उसकी प्राप्ति नहीं करा सकता ।'

मातृ-दृष्टि

शिवके पुत्र कार्तिकेयने एक बार अपने नाख़ूनसे एक बिल्लीके जिस्म-पर लाइन बना दी । घर जाकर उन्होंने देखा कि उनकी माँ पार्वतीके गालपर खसोटनेका निशान है । पूछा—'माँ, तुम्हारे गालपर यह भद्दी लकीर कैसी है ?' जगदम्बा बोलीं—'बेटा, तूने ही अपने नाख़ूनसे इसे बनाया है ।'

'मैंने ? मुझे तो याद नहीं आता कि मैंने ऐसा कभी किया हो !'

'तूने आज बिल्लीको नहीं खसोटा ?'

'हाँ, पर वह निशान तुम्हारे गालपर कैसे ?' माँ बोली—'मेरे प्यारे बच्चे ! सारी सृष्टि मैं ही हूँ । मेरे सिवाय संसारमें और कुछ है ही नहीं । अगर तुम किसीकी हिंसा करते हो तो मेरी ही हिंसा करते हो ।'

कार्तिकेय यह सुनकर दंग रह गये और तबसे हर एकको मातृ-दृष्टि-से देखने लगे । इसीलिए उन्होंने शादी भी नहीं की ।

उसकी हँसी

ईश्वर दो मौक़ोंपर हँसता है । जब वैद्य रोगीकी माँसे कहता है—'डरो मत, माँ, मैं तुम्हारे लड़केको ज़रूर अच्छा कर दूँगा ।' ईश्वर

२

हँसकर मनमें कहता है—'मैं तो इसकी जान ले लेनेवाला हूँ और यह शख्स कहता है कि उसे बचा लेगा !' ईश्वर फिर एक बार तब हँसता है जब दो भाई अपनी ज़मीनको रस्सीसे बाँटकर एक दूसरेसे कहते हैं— 'इधरकी मेरी है, उधरकी तुम्हारी ।' ईश्वर हँसकर मनमें कहता है— 'सारा विश्व तो मेरा है, लेकिन ये लोग इस हिस्से या उस हिस्सेको अपना बता रहे हैं !'

विष्णुमय जगत्

एक साधु आनन्दमें निरन्तर मस्त रहता था। लोग उसे पागल समझते थे। एक रोज़ वह गाँवसे कुछ खाना लाया और एक कुत्तेके पास बैठकर खाने लगा। एक निवाला कुत्तेको खिलाता एक ख़ुद खाता। दोनोंको यूँ खाते देख लोगोंकी भीड़ लग गई। कुछ लोग उसे पागल कहकर हँसने लगे। इसपर वह बोला—

'तुम हँसते क्यों हो ? विष्णु विष्णुके पास बैठा है। विष्णु विष्णुको खिला रहा है। तुम क्यों हँसते हो विष्णु ? जो कुछ है, विष्णु है।'

याचना

एक सन्तको बड़ी तीव्र भूख लगने लगी, मगर खानेको कुछ नहीं था। मनने कहा—'प्रभुसे माँग लो।' अन्तरात्मा बोला—'विश्वासी आदमीका यह काम नहीं है।'

मन—'खाना न माँगो, पर धीरज तो माँग लो।'

अन्तरात्मा—'हाँ, धीरज माँगा जा सकता है।'

इसपर उन्हें अपने अन्दर भगवान्की दिव्य वाणी सुनाई दी—'धीरजका

समुद्र, मैं, तो सदा तेरे साथ हूँ। तू याचना करके अपने विश्वासको क्यों खो रहा है ? क्या मैं बिना माँगे नही देता ? भक्तके योगक्षेमका सारा भार उठानेकी तो मैने घोषणा कर रक्खी है।'

सन्त—'सच है ! मैं भूला था प्रभो !'

निन्दा

शेख़ सादी अपने पिताके साथ मक्का जा रहे थे। क़ाफ़िलेका नियम था—आधीरातको उठकर प्रार्थना करना। एक दिन आधी रातको सादीने प्रार्थनाके बाद दूसरे लोगोंको सोते देख अपने पितासे कहा—'देखिए, ये लोग कितने आलसी है, न उठते है, न प्रार्थना करते हैं !'

पिताने कड़े शब्दोंमें कहा—'अरे सादी ! बेटा ! तू भी न उठता तो अच्छा होता। जल्दी उठकर दूसरोंकी निन्दा करनेसे तो न उठना ही ठीक था।'

जानकार

संत मंसूरको सूलीपर चढ़ानेसे पहले लोगोंने उन्हें घेर लिया और पत्थर बरसाने लगे। मौलाना रूमको लगा कि इस वक़्त लोगोंका साथ देना फ़र्ज़ आ गया है। चुनाँचे उन्होंने भी एक फूल मंसूरपर मारा। मंसूर बोले—'तुम्हारे इस फूलसे मुझे वज्रसे भी ज़्यादा आघात पहुँचा है।'

मौलाना—'और इन लोगोंके पत्थरोंसे कुछ नहीं ?'

मंसूर—'ये तो अनजान हैं, पर तुम तो मुझे जानते थे।'

स्वधर्म परधर्म

एक धोबीके यहाँ एक गधा था और एक कुत्ता। कुत्तेने देखा कि मालिक उसे गधेसे कम खाना देता है, इसलिए वह मालिकसे ख़फ़ा रहने लगा।

एक रात धोबीके यहाँ चोर आये और सारा सामान बाँधकर ले जाने लगे, मगर कुत्ता नहीं भोंका। गधेने उसे बार-बार समझाया कि इस वक़्त भोंककर मालिकको जगाना तेरा फ़र्ज़ है। मगर नाराज़ीके मारे कुत्ता चुप ही रहा। गधेने उसकी ग़ैर-वफ़ादारी देखकर खुद ही रेंकना स्वधर्म समझा। मालिक चिढ़ा कि कमबख़्तने बेवक़्त रेंक-रेंककर नींद उड़ा दी। उसने तावमें आकर डंडा उठाया और गधेको पीटना शुरू कर दिया। उसे इतना मारा कि वह मर गया। इसके बाद धोबीकी घरपर नज़र पडी तो देखा कि घर ख़ाली है! उसने सोचा कि चोर आये मगर यह हरामी कुत्ता भोंका ही नहीं! उसने उसी डंडेके एक ही वारसे कुत्तेकी खोपड़ी चकनाचूर कर दी।

यह स्वधर्म पालन न करनेके कारण मारा गया, वह परधर्ममें पड़नेके कारण।

सेज

एक दासी रोज़ अपनी रानीकी सेज बिछाया करती, ख़ूब सजाकर। एक दिन उसकी इच्छा हुई कि खुद उसपर लेटकर देखे। लेटनेपर उसे नींद आ गई। इसी बीच रानी आ गई। वह दासीको सेजपर सोई देख आग-बबूला हो गई। दासीको झकझोरकर जगाया। वह बेचारी डरसे थर-थर काँपने लगी। रानीने उसे कोड़े लगाने शुरू किये। दासी पहले तो रोई-चिल्लाई। बादमें ज़ोरसे हँसने लगी। रानीको इससे बड़ा ताज्जुब हुआ। उसने उससे हँसनेका सबब पूछा। दासी बोली—'रानीजी, मैं एक दिन थोड़ी देरके लिए इस पलंगपर सो गई तो मुझपर ऐसे कोड़े पड़ रहे हैं, लेकिन इसपर रोज़ सोनेवालेकी न जाने क्या हालत होगी—यही सोचकर मुझे हँसी आ गई।'

साधुता

जाफ़र सादिक़ एक मशहूर सन्त थे। एक बार किसी आदमीके रुपयों-की थैली चोरी चली गई। भ्रमवश उसने उन्हें पकड़ लिया।

आपने पूछा—'थैलीमे कितने रुपये थे ?'

'एक हज़ार,' उसने बताया।

आपने अपनी तरफ़से उसे एक हज़ार रुपये दे दिये।

कुछ दिनों बाद असली चोर पकड़ा गया। रुपयोंका मालिक घबराया! वह एक हज़ार रुपये लेकर सतके पास पहुँचा और उनके चरणोंपर रखकर क्षमा-प्रार्थनाएँ करने लगा।

संत बड़ी नम्रता और मृदुतासे बोले—

'दी हुई चीज़ मैं वापस नहीं लेता।'

अशोभन

बादशाह हारूँ रशीदके एक लड़केने एक दिन आकर अपने पितासे कहा कि, 'फ़लाँ सेनापतिके लड़केने मुझे माँकी गाली दी है।' पूछनेपर मंत्रियोंमेंसे किसीने कहा—'उसे देश-निकाला दे देना चाहिए।' कोई बोला—'उसकी ज़बान खिंचवा लेनी चाहिए।' किसीने मशवरा दिया—'उसे फ़ौरन् सूली पर चढ़ा देना चाहिए।'

आख़िर हारूँने कहा—'बेटा, अगर तू अपराधीको क्षमा कर सके तब तो सबसे अच्छी बात है। क्रोधका कारण मौजूद होने पर भी जो शान्त रह सकता है वही सच्चा वीर है। और अगर तुझमें इतनी शक्ति न हो तो तू भी उसे वही गाली दे सकता है; लेकिन यह क्या तुझे शोभा देगा ?

कपटी

तपस्वी मलिक दिनार अत्यन्त सरल और पवित्र हृदयके महात्मा थे। एक दिन एक स्त्रीने उन्हें 'कपटी' कह कर पुकारा। अत्यन्त आदर और विनय पूर्वक उन्होंने फ़ौरन् कहा—'बहिन! इतने दिनोंमें मेरा सच्चा नाम लेकर पुकारने वाली सिर्फ़ तुम ही मिली हो। तुमने मुझे ठीक पहचाना!'

मूर्ख शिष्य

शंकराचार्य महान्का एक मूर्ख शिष्य था। वह हर बातमें उनकी नक़ल किया करता था। शंकर 'शिवोऽहं' कहते तो वह भी 'शिवोऽहं' कहता। शंकरने उसकी यह बेवक़ूफ़ी दूर करनी चाही। एक रोज एक लुहारकी दुकान पर उन्होंने एक पात्रमें पिघला लोहा लिया और पी डाला। शिष्यसे बोले—'तू भी पी।' शिष्य भला यह कहाँ कर सकता था। तबसे उसने 'शिवोऽहं' कहना छोड़ दिया।

रामनामकी शक्ति

एक राजासे ब्रह्म-हत्या हो गई। इस घोर पापके प्रायश्चित्तके लिए वह एक ऋषिके आश्रममें गया। ऋषि तो बाहर गये हुए थे, लेकिन उनका लड़का वहाँ था। राजाकी बात सुनकर उसने कहा—'रामका नाम तीन बार लो, तुम्हारे दोषका प्रक्षालन हो जायेगा।'

जब ऋषिने लौट कर प्रायश्चित्त-विधानकी बात सुनी तो रुष्ट होकर बोले—'भगवान्का नाम केवल एक बार लेनेसे असंख्य जन्मोंके पाप कट जाते हैं। तेरा विश्वास कितना कच्चा है कि तूने तीन बार नाम लेनेके लिए कहा!'

अभेद

शुकदेव ब्रह्मज्ञान सीखनेके लिए जनकके पास गये। जनक बोले—'गुरुदक्षिणा पहले दे दो। ब्रह्मज्ञान प्राप्त करनेके बाद तुम गुरुदक्षिणा नहीं दोगे, क्योंकि ब्रह्मज्ञानी गुरु और शिष्यमें भेद नहीं देखता।'

सन्त तुकाराम

सन्त तुकाराम अत्यन्त निर्धन थे। परन्तु अपने बड़े परिवारके भरण-पोषणका सारा बोझ उन्हींपर था और इधर तुकाराम संसारी आदमी थे ही नहीं!

एकबार खेतमें गन्ने तैयार हुए। तुकारामजीने गन्ने काटे और बाँधकर सिरपर रखे, गन्ने बिकें तो घरवालोंके मुँहमें अन्न जाय। लेकिन रास्तेमें बच्चे इनके पीछे लगकर गन्ने माँगने लगे। जो सबमें अपने प्रभुको ही देखते हों, कैसे मना कर दें? गन्ने बच्चोंको बाँट दिये। सिर्फ़ एक गन्ना बचा जिसे लेकर वे घर पहुँचे।

उनकी पहली स्त्री रखुमाई बड़े चिड़चिड़े स्वभावकी थी। जब पति-देवको केवल एक गन्ना लाते देखा तो सारी कैफ़ियत समझ गई। क्रोधसे आगबबूला हो गई। उसने तुकारामके हाथसे गन्ना छीनकर उसे उनकी पीठपर ज़ोरसे मारा। टूटकर गन्नेके दो टुकड़े हो गये।

तुकारामके मुखपर क्रोधके बदले हँसी आ गई। बोले—'हम दोनोंके लिए गन्नेके दो टुकड़े मुझे करने ही पड़ते। तुमने बिना कहे ही यह काम कर दिया। कैसी साध्वी हो तुम!'

बुलन्दी

कवीन्द्र रवीन्द्रकी बढ़ती हुई ख्यातिसे कुछ लोग बेहद जलने लगे। उन्होंने अपने हृदयकी कलुषता पत्र-पत्रिकाओंमें बखेरनी शुरू कर दी। लेकिन टैगोर समभावसे सब सहन करते रहे।

शरच्चन्द्रसे जब ये कटु आलोचनाएँ न सुनी गईं तो उन्होंने विश्व-कविसे कहा कि वे इन आलोचकोंका मुँह बन्द करनेका कुछ उपाय करें। टैगोर शान्तभावसे बोले—

'उपाय क्या है शरत् बाबू ? जिस शस्त्रको लेकर वे लोग लड़ाई करते हैं, उस शस्त्रको मैं हाथसे छू भी नहीं सकता।'

कृष्णकी पसन्द

धर्मराज युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें कृष्ण भी गये थे। कहने लगे—'मुझे भी काम दो।' धर्मराजने कहा, 'आपको क्या काम दें ! आप तो हमारे लिए आदरणीय हैं। आपके लायक़ हमारे पास कोई काम नहीं है।' भगवान्‌ने कहा कि, 'मैं आदरणीय हूँ तो क्या अयोग्य भी हूँ ? मैं भी काम कर सकता हूँ।' धर्मराज बोले—'आपही अपना काम ढूँढ़ लीजिए।' तो भगवान्‌ने क्या काम लिया ?—जूँठो पत्तलें उठानेका और लीपनेका !

—विनोबा

नमककी गुड़िया

एक बार एक नमककी गुड़िया समन्दरकी थाह लेने गई ताकि औरोंको पानीकी गहराई बता सके। लेकिन समन्दरमें पहुँचकर वह खुद ही घुलकर ख़त्म हो गई।

ब्रह्मका अनुभव करनेवाले भी उसमें इसी तरह ग़र्क़ हो जाते हैं। समाधिमें होनेवाली ब्रह्मानुभूति मन और वाणीसे परे है, इसलिए उसका वर्णन नहीं हो सकता।

अपरम्पार लीला

भीष्म अपनी शर-शय्यापर पड़े हुए थे। पाण्डव और कृष्ण उनके पास खड़े थे। उन्होंने भीष्मकी आँखोंसे आँसू निकलते देखे। अर्जुनने कृष्णसे पूछा—'विचित्र बात है कि भीष्मपितामह सरीखे ज्ञानी और संयमी वीरात्मा भी मायावश मृत्युके समय रो रहे हैं!' श्रीकृष्णने भीष्मसे इसका कारण पूछा। भीष्म बोले—'कृष्ण! तुम भलीभाँति जानते हो कि यह मेरे रोनेका कारण नहीं है। मुझे ख़्याल आया कि स्वयं भगवान् जिन पाण्डवोंके सारथी हैं उनकी विपदाओंका अन्त ही नहीं है। इससे मुझे लगा कि मैं ईश्वरकी लीलाको कुछ भी न समझ सका, इसीलिए मेरे आँसू बहने लगे।'

शिक्षण

किसीने लुक़मानसे पूछा—'आपने तमीज़ किससे सीखी?' उसने जवाब दिया—'बदतमीज़ोंसे। क्योंकि मैंने उन लोगोंमें जो कुछ बुरी बात देखी उससे परहेज़ किया। अक़्लमन्द खेलसे भी शिक्षा प्राप्त कर लेता है। बेवक़ूफ़ हिक़मतकी सौ बात सुन लेनेपर भी खेल और बेवक़ूफ़ी ही सीखता है।'

धर्मवेशी लुटेरे

एक सुनारने जवाहिरातकी दुकान खोल रक्खी थी। देखनेमें वह बड़ा धर्मात्मा लगता था—माथेपर तिलक, गलेमें माला, हाथमें सुमिरनी। इस

लिए लोग विश्वास करते कि वह धोखा नहीं दे सकता। लेकिन जब कभी ग्राहक उसकी दुकान पर आते तो उसकी सहायक-मंडलीमें से एक कहता— 'केशव ! केशव !' कुछ देरमें दूसरा कहता—'गोपाल ! गोपाल !' तब तीसरा बोलता—'हरि ! हरि'। अन्तमें एक कहता 'हर ! हर !' ईश्वरके इन नामोंका उच्चार होते देख ग्राहकोंका उसकी प्रामाणिकता पर विश्वास और भी दृढ़ हो जाता। लेकिन ईश्वरके ये नाम उस धूर्त सुनार द्वारा सांकेतिक शब्दों (Code words) के तौरपर इस्तैमाल किये जाते थे। जो आदमी 'केशव' केशव' कहता उसका तात्पर्य यह पूछनेका था कि 'ये ग्राहक कैसे हैं ?' जो 'गोपाल, गोपाल' कहता वह जतलाता कि 'ये लोग बिलकुल बैल हैं।' यह अनुमान वह उनसे थोड़ी देरकी बात-चीत-में ही लगा लेता था। 'हरि, हरि' कहने वाला पूछता—'तो क्या हम इन्हे लूटें ?' इसका जवाब 'हर, हर' कहने वाला देता—'इन बैलोंको ज़रूर लूट लो।'

भक्त

एक बार अर्जुनको यह अहंकार हुआ कि मैं ही भगवान्का सबसे बड़ा भक्त हूँ। श्रीकृष्णने उसके दिलकी यह बात जान ली। वे उसे टहलाने ले गये। रास्तेमें उन्होंने एक अजीब ब्राह्मण देखा। वह सूखी घास खा रहा था, फिर भी उसकी कमरसे तलवार लटकी हुई थी।

अर्जुनने उससे कहा—'आप तो अत्यन्त अहिंसक मालूम होते हैं कि जीवहिंसाके डरसे सूखी घास खाते हैं। फिर भी हिंसाका उपकरण, तलवार, क्यों लिये हुए हैं ?'

ब्राह्मण बोला—'यह चार व्यक्तियोंको दंड देनेके लिए है। अगर वे मुझे मिल जाँय तो उनके सिर उड़ा दूँ।'

अर्जुन—'कौन हैं वे ?'

ब्राह्मण—'एक तो है बदमाश नारद। मेरे प्रभुके आरामका ख्याल रक्खे बग़ैर सदा भजन-कीर्तनसे उन्हें जाग्रत रखता है! दूसरी है धृष्ट द्रौपदी—उसने मेरे प्रभुको ठीक उस वक़्त पुकारा जब कि वे भोजन करने बैठे ही थे। उन्हें खाना छोड़कर तत्काल दुर्वासा ऋषिके शापसे पाण्डवों को बचाने जाना पड़ा! उसकी धृष्टता यहाँ तक बढ़ी कि उसने अपना बचा-खुचा जूठा खाना भगवान्को खिलाया! तीसरा है हृदयहीन प्रह्लाद—उस निर्दयने मेरे भगवान्को गरम तेलके कड़ाहमें प्रविष्ट कराया, हाथीके पैरोंके नीचे कुचलवाया और खंभेमें से प्रकट होनेके लिए विवश किया! चौथा है बदमाश अर्जुन। उसकी गुस्ताख़ी देखो! उसने मेरे प्रिय भगवान्को अपने रथका सारथी बना डाला!'

अर्जुन उस ब्राह्मणकी भक्ति और प्रेमको देखकर दंग रह गया। उसे यह ग़रूर फिर कभी न हुआ कि मैं ही भगवान्का सबसे बड़ा भक्त हूँ।

रावणकी रामभक्ति

मंदोदरी अपने पति रावणसे बोली—'अगर तुम्हें सीताको अपनी रानी बनानेकी इतनी तीव्र इच्छा है तो तुम उसके पास रामका रूप रख-कर क्यों नहीं जाते?'

'क्या बकती है!' रावण बोला। 'रामका पवित्र रूप धारण करके क्या मैं इन्द्रिय-भोगोंमे लिप्त हो सकता हूँ?—उस दिव्य रूपका तो ध्यान आते ही मैं ऐसे अनिर्वचनीय आनन्द और धन्यतासे ओतप्रोत हो जाता हूँ कि वैकुण्ठ भी तुच्छ नज़र आने लगता है!'

गुरु गोविन्दसिंह

एक बार गुरु गोविन्दसिंह जमुनाके किनारे बैठे हुए थे। उस वक़्त उनका एक धनवान् भक्त आया और उनके आगे दो रत्नजटित सोनेकी चूड़ियाँ रखकर उन्हें स्वीकार करनेकी प्रार्थना करने लगा।

गुरुकी नज़रमें सोना और मिट्टी समान थे। वे उनमेंसे एकको उठाकर उँगलीपर फिराने लगे। फिरते-फिरते वह जमुनामें जा गिरी। भेंट देने वाला फ़ौरन् नदीमें कूद पड़ा, लेकिन उसे चूड़ी नहीं मिली। जब वह ख़ाली हाथ लौटा तो गुरु गोविन्दसिंहने दूसरी चूड़ीको भी फेंकते हुए बताया—'देख, चूड़ी वहाँ पड़ी है।'

आज़ादी

दो भाई थे, एक तो राजाकी नौकरी करता था, दूसरा शारीरिक परिश्रमसे अपनी रोज़ी कमाता था, एक बार अमीर भाईने ग़रीब भाईसे कहा—'तुम नौकरी क्यों नहीं कर लेते जिससे परिश्रमके कष्टसे छुटकारा पा जाओ ?'

'तुम मेहनत क्यों नहीं करते जिससे चाकरीके अपमानसे छूट जाओ ?' दूसरेने तड़ाकसे जवाब दिया।

स्वात्माभिमान

हातिमताईसे पूछा गया—'क्या आपने किसीको अपनेसे भी ज़्यादा स्वात्माभिमानी देखा है ?'

हातिम बोला—हाँ। एक दिन हमारे यहाँ बहुत बड़ा भोज हो रहा था। उसमें मैंने एक लकड़हारेको देखा जो पीठपर गट्ठर रक्खे हुए था। मैंने उससे पूछा—'तुम हातिमकी दावतमें क्यों नहीं गये ? आज उसके दस्तरख़्वान पर बहुतसे लोग जमा हुए हैं।' उसने जवाब दिया—'जो अपने हाथकी कमाई रोटी खाता है वह हातिमताईका अहसान न लेगा।'

उस शख़्सको मैंने आत्म-गौरवमें अपनेसे बढ़कर माना।

—शेख़ सादी

अमरता

नौशेरवाँके पास कोई खबर लाया कि, 'खुदाके फ़ज्लसे आपका फ़लाँ दुश्मन मर गया।' बादशाहने कहा—'क्या तुमने सुना है कि खुदा किसी तदबीरसे मेरी जान बचा सकेगा? अपने दुश्मनकी मौतसे मुझे कोई खुशी नहीं हो सकती, क्योंकि खुद मेरी ही ज़िन्दगी जाविदानी (अनन्त-कालीन) नहीं है।'

याद

किसी बादशाहने एक महात्मासे पूछा—'क्या आपको कभी मेरी भी याद आती है?' उसने जवाब दिया, 'हाँ, जब मैं ईश्वरको भूल जाता हूँ।'

भावना

दो दोस्त तफ़रीहके लिए बाहर निकले, एकने कहा—'चलो यार, भागवतकी कथा सुनने चलें'। पर दूसरेको कथामें विशेष रस नहीं आया इसलिए वह अपने मित्रसे कहकर किसी मुजरेमें चला गया। पर वहाँ शीघ्र ही उसकी तबीयत ऊब गई; कहने लगा—'मेरे मित्रको देखो, धर्म-श्रवणका आनन्द ले रहा होगा और मैं इस ग़लीज़ जगहमें फँसा हुआ हूँ!' लेकिन जो भागवत सुन रहा था वह भी जल्दी ही उकता गया; सोचने लगा—'कहाँ फँस गया! इससे तो मेरा दोस्त ही अच्छा रहा, मज़े लूट रहा होगा।'

जब वे मरे, तो भागवत सुननेवाला नरक गया और वेश्याके यहाँ जानेवाला स्वर्ग गया।

सचमुच, मनुष्यकी गति भावोंके अनुसार होती है।

बड़ी मार पड़ेगी !

एक सेठजी अपनी विशाल हवेलीकी आकाशीपर बैठे हुए फल-फलादि खा रहे थे और छिलके नीचे फेंकते जाते थे। वहाँसे निकलता हुआ एक पागल-सा आदमी छिलकोंको खाने लगा। यह देखकर सेठके नौकरोंने उसे डपटकर चले जानेको कहा। मगर पागलने उसे गनकारा नहीं, इसलिए नौकरोंने उसे मारना शुरू कर दिया। मगर जितनी ज़्यादा मार पड़ती गई उतनी ही बुलन्द आवाज़से वह हँसता गया। इतनेमे सेठजीकी नज़र उसपर पड़ी। देखकर सख्त ताज्जुब हुआ। बुलाया और उससे हँसनेका कारण पूछा। वह बोला—'सेठजी ! इसमें ताज्जुब करनेकी कोई बात नहीं। मैं यह हँस रहा था कि छिलके खानेवाले पर इतनी मार पड़ती है तो गूदा खानेवालों पर कितनी मार पड़ेगी !'

सेठजी यह जवाब सुनकर सन्न रह गये और क्षमा माँगने लगे।

तीसरे महायुद्धके बाद !

एक सुबह, जब सारी दुनिया तीसरे महायुद्धके कारण मौतके मुँहमें समा चुकी थी, एक बन्दर एक तहखानेसे बाहर निकला। जब उसने अपनी नजरें चारों ओर दौड़ाई तो हर तरफ़ बरबादी और तबाहीका ही क्रूर दृश्य देखकर वह काँप उठा ! संतप्त हो वह सामनेके ऊँचे पहाड़की चोटीपर चढ़ गया और कूदकर जान देने ही वाला था कि पीछे एक आहट सुनाई पड़ी। घूमकर उसने देखा—एक दूसरे तहखानेसे एक बँदरियाँ बाहर निकलकर उसकी ओर देख रही थी। बन्दर मरनेका ख्याल छोड़कर उसके पास पहुँच गया और बड़ी परेशानीके साथ बोला—'खुदा खैर करे ! क्या हम लोगोंको अब फिरसे सृष्टिकी रचना करनी होगी ?'

—नोबल पुरस्कार विजेता, विलियम फ़ाकनर

अहिंसा

किसी जंगलमें एक भयानक साँप रहता था। एक बार एक सन्त उसके पाससे गुज़रे। साँप उनके क़दमोंमें लोटकर अपने उद्धारकी प्रार्थना करने लगा। सन्त बोले—'किसीको काटा मत कर, तेरा भला होगा।'

साँपने काटना छोड़ दिया। उसके इस परिवर्तनकी चर्चा दूर-दूर तक फैल गई। नतीजा यह हुआ कि दुष्ट जन उसे लकड़ी, पत्थर आदिसे मार-मारकर सताने लगे।

एक बार वही सन्त फिर उधरसे निकले। साँपने अपनी दुःख-गाथा बयान की—'महाराज, आपने अच्छा उपदेश दिया, मेरा तो जीना ही मुहाल हो गया!'

सन्त बोले—'भाई! मैंने तुझसे काटनेके लिए मना किया था; यह कब कहा था कि तू फुफकारना भी मत?'

शान्ति चाहिए तो फिर लड़ते क्यों हैं?

[एक पुरानी जर्मन दन्त-कथा]

एक मूर्ख रास्तेमें खड़ा हुआ हथियारबन्द फ़ौज आती हुई देख रहा था।

उसने पूछा—'ये लोग कहाँसे आ रहे हैं?'

'शान्तिमें से।'

'कहाँ जा रहे हैं?'

'युद्धमें।'

'युद्धमें ये क्या करते हैं?'

'दुश्मनोंको मारते हैं, उनके शहरोंको जलाते हैं,...........'

'ऐसा क्यों करते हैं ?'

'शान्तिको पा जानेके लिए।'

मूर्ख बोला—'मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि इन सब लोगोंको शान्तिमें से युद्धमें क्यों जाना पड़ता है ? ये लोग अपनी पहली वाली शान्तिमे ही क्यों नहीं रहते ?'

साधुओंकी उदारता

एक दिन रामदास स्वामी अपने शिष्योंके साथ एक गन्नेके खेतके सामनेसे गुज़र रहे थे। उनमेंसे एक शिष्यने गन्ना तोड़कर खाया। इस तरह बिना पूछे गन्ना खाता देखकर यकायक कहींसे खेतका मालिक आ चमका और उसने स्वामी रामदासको सबका सरदार समझकर खूब पीटा।

शिवाजीको जब इस बातकी खबर पड़ी तो उसने खेतके मालिकको बुलवाया। उसने आकर देखा कि रामदास स्वामी सिंहासनपर बैठे हैं और शिवाजी नीचे। यह देखकर वह थरथर काँपने लगा।

शिवाजीने कहा—

'स्वामीजी, आप जो कहें सो सजा इसे दूँ।'

'जो कहूँगा सो करोगे ?'

'स्वामीजी, क्या मैं आपकी आज्ञाका पालन न करूँगा ?'

'यह ग़रीब है, गन्ना कम हो जानेसे आघात लगना स्वाभाविक है। इसका दारिद्रय दूर करनेके लिए इसे कोई जागीर दे दो।'

प्यार

एक पादरी एक पहाड़ीपर चढ़ रहा था। उसी समय एक छह-सात वर्षकी लड़की भी अपने दो वर्षके भाईको गोदीमें लिये चढ़ रही थी और हाँपती जाती थी।

पादरीने कहा—'अरे,.यह लड़का तो तेरे लिए बहुत भारी है !'

लड़कीने जवाब दिया—'बिलकुल भारी नहीं है, यह तो मेरा भाई है ।'

जहाँ प्रेम होता है, वहाँ भारी-से-भारी चीज़ भी फूलसे भी हलकी बन जाती है ।

जंगख़ोर

प्रोफ़ेसर मौलिनौस्की अफ़रीक़ाके एक नरभक्षीसे मिले ।

आदमख़ोर बोला कि, 'पिछले महायुद्धकी एक बात मैं अभी तक नहीं समझ पाया । तुम लोगोंने इतने आदमी मार डाले, पर उन सबको खा कैसे गये होगे ?'

प्रोफ़ेसर—'उन्हें खानेके लिए थोड़े ही मारा था !' आदमख़ोर अत्यन्त घृणा भावसे बोला—'जंगख़ोर भी आदमख़ोरसे किस क़दर वदतर होता है कि बिला वजह आदमियोंको मारता है !'

आनन्दका रहस्य

विदर्भ देशका एक राजा बड़ा उदास और दुखी रहता था । उसे प्रसन्नचित्त बनानेके बड़े-बड़े उपाय किये गये मगर सब व्यर्थ । आख़िरकार एक दार्शनिकने उसे आश्वासन दिया कि अगर वह किसी सचमुच सुखी आदमीका पहरन मँगा ले तो पूर्ण आनन्द प्राप्ति हो सकती है ।

राजाके लोग सब दिशाओंमें भेजे गये—बड़ी तलाशके बाद उन्हे किसी जंगलमें भेड़ चराता हुआ एक गड़रिया मिला जो वास्तवमें आनन्द-स्वरूप था । राजाको यह जानकर बड़ी ख़ुशी हुई । लेकिन जब दरबारमें लाकर उससे उसका पहरन माँगा गया तो वह बोला, 'मैं तो कभी कोई पहरन रखता ही नहीं !'

३

मान-दान

एक बार एक दिग्विजयी विद्वान् भारतके भिन्न-भिन्न नगरोंमें अनेकों पण्डितोंको परास्त करता काशीमें आया। उस समय काशीमें एक महात्मा सबसे बड़े विद्वान् समझे जाते थे। उनके वहाँ हज़ारों शिष्य थे। दिग्विजयीने उनके पास जाकर कहा कि यदि आप मुझे पराजय-पत्र लिख कर दे दें तो अनायास ही मैं महान् कीर्तिमान् बन सकता हूँ। महात्माजी ने बिना किसी प्रकारकी आपत्ति किये उसे पराजय-पत्र दे दिया। तब वह अपनी विजय घोषित करता हुआ बाजे-गाजेके साथ काशीके राजमार्गसे निकला। इसी समय उसे उन महात्माजीके कुछ शिष्य मिले। उन्होंने सारे समाचार जानकर उसे शास्त्रार्थके लिए आमन्त्रित किया और थोड़ी ही देरमें एक शिष्यने उसे परास्त कर दिया। इससे उसका बड़ा तिरस्कार हुआ और उसे वहीं अपनी सवारी छोड़नी पड़ी। जब महात्माजीको ज्ञात हुआ, तो खेद प्रकट करते हुए यह कह कर कि 'इस प्रकारके वेदान्त-श्रवणसे क्या लाभ है ?' आजन्म मौन धारण कर लिया।

—श्री उड़िया बाबा

महान् कौन ?

ग्रीस देशमें डायोजिनीज़ नामक एक महान् सन्त रहता था। सिकन्दर उसकी शोहरत सुनकर उससे मिलने गया। सन्त किसी जंगलमें अपनी मिट्टीकी नाँदमें नंगधड़ंग बैठा हुआ धूप खा रहा था।

सिकन्दरने कुछ देर स्वागतकी प्रतीक्षा की, आखिरश चिढ़कर-बोला—'देखो ! मैं सिकन्दर महान् हूँ।'

'देखो ! मैं डायोजिनीज़ महान् हूँ' सन्तने वीरतापूर्वक जवाब दिया।

सिकन्दर हतप्रभ होकर बोला—'आपके नामकी तो बड़ी धूम मची हुई है। कहिए मैं आपकी क्या सेवा करूँ।'

शान्त गौरवके साथ सन्त बोला—'सिर्फ़ हटकर खड़े हो जाओ और सूरजकी धूप मेरे ऊपर आने दो।'

पापी कौन ?

एक बार आदमीके शरीर और आत्मामें बहस छिड़ गई। शरीर तमक कर बोला—'मैं तो जड़ हूँ—मिट्टीका पिण्ड ! मोह पैदा करनेवाली चीज़ोंको देख भी नहीं सकता। फिर भला मैं पाप कैसे कर सकता हूँ ?'

आत्मा कैसे चुप रहती ? बोली—'मेरे पास पाप करनेके साधन ही नहीं हैं, मैं पाप कैसे कर सकती हूँ ? इन्द्रियोंके बिना भी कोई काम हो सकता है क्या ?'

भगवान्ने सुना तो मुसकरा पड़े और बोले—'सचमुच तुम दोनों बराबर ज़िम्मेदार हो ! शरीरके कन्धों पर जब आत्मा आ बैठती है, तब दोनोंके सहकारसे ही पापका जन्म होता है।'

—टॉलस्टॉय

ताक़त

'ईश्वरकी ताक़त ज्यादा है या शैतानकी ?'

'ईश्वरकी।'

'अगर ईश्वरकी ताक़त ज़्यादा है तो शैतान ईश्वरकी हर चीज़ बिगाड़ कैसे देता है ?'

'एक अच्छी मूर्ति बनानेमें कितना वक़्त लगता है ? मगर उसे तोड़नेमें ? एक महात्मा किसी आदमीको दस वर्षमें जितना सुधार पायेगा, एक दुरात्मा दस दिनमें उसे उससे ज़्यादा भ्रष्ट कर देगा, किसीकी ताक़तका अन्दाज़ा बिगाड़नेसे नहीं, बनानेसे लगता है।'

—सत्यभक्त

दान

मैं जब गाँवमें घर-घर भीख माँगने निकला हुआ था, तब तेरा स्वर्ण-रथ एक सुनहले सपनेकी तरह दूर दिखाई दिया । मैं ताज्जुब करने लगा कि यह सम्राटोंका महिमामय सम्राट् कौन है ? मुझे उम्मीद बँधी कि मेरे बुरे दिनोंका अब अन्त होनेवाला है, मैं बिना माँगे दानकी प्रतीक्षामें खड़ा रहा—उस ऐश्वर्यके लिए भी जो धूलमें सब तरफ़ बिखरा पड़ा है । जहाँ मैं खड़ा था, वहाँ तेरा रथ आकर रुका, तेरी नजर मुझपर पड़ी और तू मुसकराते हुए नीचे उतर आया, मैंने अनुभव किया कि मेरे जीवनका सौभाग्य आखिर लौट आया है । तब यकायक तूने अपना दायाँ हाथ बाहर निकालकर मुझसे कहा, 'क्या दोगे ?'

ओफ़ ! यह कितना बड़ा मज़ाक था । एक भिखारीके आगे अपने हाथ फैलाना ! मैं बड़ी उलझनमें पड़ गया, मैंने तब अपने झोलेमेंसे आहिस्तासे अन्नका एक छोटा दाना निकाला और तुझे दे दिया । लेकिन मेरे आश्चर्यका कोई ठिकाना न रहा, जब सूरज-छिपे मैंने ज़मीनपर अपने झोलेको खाली किया तो एक सोनेका दाना उसपर आ गिरा, मैं जार-ज़ार रोता हुआ सोचने लगा कि काश, मैंने अपना सर्वस्व तुझे दे डाला होता !

—रवीन्द्रनाथ टैगोर

भौतिक सम्पत्ति

राम जब सीताको रावणके चंगुलसे छुड़ाकर अयोध्या आये, तो उन्होंने अपने सब सहयोगियोंको पुरस्कृत किया, मगर हनुमानके अहसानोंका ऋणी ही रहना मुनासिब समझा ।

सीता बोली—'आपने सबको दिया, पर हनुमानको तो कुछ दिया ही नहीं ।'

राम—'उसे तुम जो चाहे सो दे सकती हो, तुम भी तो लक्ष्मीकी अवतार हो।'

सीताने उसी वक़्त अपना बेशक़ीमती हार गलेसे उतारकर हनुमानको दे दिया।

हनुमानने उसके रत्नोंको दाँतोंसे तोड़कर देखा और फेंक दिया। बोले—'इसमें कहीं राम तो है ही नहीं, मैं इसका क्या करूँगा।'

दृष्टि

एक चोर सारी रात कोशिश करनेपर भी किसी मकानमें घुस सकनेमे असफल रहा। आख़िर थककर लबे-सड़क एक पेड़के नीचे सो गया।

एक और चोर उधरसे गुज़रा। देखकर बोला—'यह तो मेरा ही कोई भाई-बन्धु है। बेचारा कामयाब न होनेपर थककर सो गया है।'

इसके बाद एक शराबी वहाँसे होकर निकला। बोला—'उफ़! इतनी पी गया है कि तन-बदनका भी होश नहीं है।'

फिर एक योगी वहाँ आये। सोते हुए चोरको देखकर बोले—'ज़रूर ये कोई समाधिस्थ साधु हैं। धन्य हैं ये!'

माँका हृदय

बहेलियेके तीरसे मरती हुई हिरनी आँखोंसे आँसू बहाती हुई बोली—'मेरे स्तनोंके अलावा मेरे सारे शरीरका मांस लेकर मुझे छोड़ दो। इतनी महरबानी करो। मेरा बेटा, जो अभी घास खाना नहीं जानता, मेरी बाट देखता होगा।'

मंत्री-पद

१९२० में एक शख़्सको मंत्री बननेके लिए कहा गया। उसने कहा कि मैं बहुत होशियार आदमी होनेका फ़ख़्र तो नहीं करता, मगर मैं अपनेको मामूली समझदार और औसत दर्जेके लोगोंसे कुछ ज़्यादा ही समझदार समझता हूँ, और मेरा ख़्याल है कि ऐसी मेरी शुहरत भी है। क्या सरकार चाहती है कि मैं मंत्री-पद मञ्जूर कर लूँ और दुनियामें अपनेको सख़्त बेवक़ूफ़ ज़ाहिर करूँ?

—'मेरी कहानी' (जवाहरलाल नेहरू)

काम

एक बार एक प्रकाण्ड विद्वान् महात्मा गाँधीसे मिलने गये। उन्होंने अपनी बड़ी आत्म-प्रशंसा की। गाँधीजी शान्तिपूर्वक सुनते रहे। आख़िरमें वह सज्जन बोले—

'मेरे लायक़ कुछ काम हो तो बताइए।'

'आपको वक़्त है?'

'हाँ, हाँ।'

'गेहूँ पीसनेमें हमारी मदद कर सकेंगे?'

ईश-प्रेम

'तू सर्वशक्तिमान् ईश्वरसे प्रेम करती है?'

'हाँ।'

'और क्या तू शैतानसे नफ़रत करती है?'

'नहीं,' रबिया बोली, 'मेरे ईश-प्रेममें किसीसे घृणा करनेकी गुंजाइश ही नहीं है।'

मैंने पैग़म्बरको ख़्वाबमें देखा। वो बोले—'रबिया, तू मुझसे प्रेम करती है?' मैंने कहा—'ओ ख़ुदाके पैग़म्बर, आपसे कौन प्रेम नहीं करता? लेकिन मैं ईश-प्रेमसे इतनी सरशार रहती हूँ कि मेरे दिलमें किसी और चीज़के लिए मुहब्बत या नफ़रत बाक़ी नहीं रही।'

—रबिया

धरती

'हे धरती! तू बड़ी कंजूस है। सख़्त महनत और एड़ी-चोटीका पसीना एक हो जानेके बाद ही तू हमें अन्न देती है। बिना महनत ही अगर तू हमें अन्न दे दिया करे, तो तेरा क्या घट जाय?'

धरती मुसकराई—'मेरी तो इसमें शान बढ़ेगी ही, लेकिन तेरी शान बिलकुल ख़त्म हो जायगी।'

—रवीन्द्रनाथ टैगोर

भक्त राँका-बाँका

भक्त राँका कंगाल और बे-पढ़े होने पर भी तीव्र वैरागी थे। राँकाजी बड़े रंक थे, इसीसे शायद उनका नाम राँका पड़ गया था। उनकी स्त्रीका नाम बाँका था। वे बड़ी साध्वी, पतिव्रता और भक्तिपरायणा थीं। वैराग्यमें तो वे राँकाजीसे भी बढ़कर थीं।

दोनों जंगलसे सूखी लकड़ियाँ बीन कर लाते और उन्हें बेच कर जो कुछ भी मिलता उससे भगवान्‌का भोग लगा कर प्रसाद पाते।

राँकाजीको स्त्री-समेत दुःख भोगते देख कर सिद्ध भक्त नामदेवजीको बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने भगवान्‌से प्रार्थना की कि राँकाजीको धन मिले।

नामदेवजीको उत्तर मिला कि राँका कुछ भी लेना नहीं चाहता; तुम्हें देखना है तो कल सुबह वनके रास्ते पर छिप कर देखना।

दूसरे दिन राँकाने जंगलके रास्ते पर मुहरोंसे भरी थैली जो देखी तो उसपर धूल डालने लगे। इतनेमें उनकी स्त्री भी आ गई। उसने पूछा, 'किस चीज़को धूलसे ढँक रहे हो?' राँकाने कहा—'यहाँ एक मुहरोंकी थैली पड़ी है; मैंने सोचा कि तुम पीछेसे आ रही हो, कहीं मुहरोंके लिए लोभ पैदा हो गया तो साधनामें विघ्न होगा, इसीलिए उसे धूलसे ढँक रहा था।'

परम वैराग्यवती स्त्री इस बातको सुन कर बोली—'सोने और धूलमें फ़र्क़ ही क्या है? आप धूलसे धूलको क्या ढँक रहे है?' ऐसे बाँके वैराग्यके कारण ही उसका नाम 'बाँका' पड़ा था। नामदेवजी राँका-बाँकाके वैराग्यको देख कर अपनेको भी तुच्छ मानने लगे।

भक्त-वत्सल भगवान्‌ने उस दिन राँका-बाँकाके लिए जंगलकी सारी सूखी लकड़ियोंके बोझे बाँध कर रख दिये। राँका-बाँकाने समझा कि किसी औरके होंगे। परायी चीज़ छूना पाप समझ कर उन्होंने उस तरफ़ ताका तक नहीं, और सूखी लकड़ियाँ न मिलनेसे दोनों ख़ाली हाथ वापस आ गये। उस दिन दोनोंको उपवास करना पड़ा। वे सोचने लगे कि यह तो मुहरें आँखसे देखनेका फल है, हाथ लगाने पर तो न मालूम क्या होता!

हज़रत ग़ौसुल

हज़रत ग़ौसुल एक बड़े साधु थे। उन्हे बचपनसे विद्याका शौक़ था। उन दिनों बग़दाद शहर विद्याओं और कलाओंका बड़ा केन्द्र था। ग़ौसुलने विद्याभ्यासके लिए बग़दाद जानेकी अपनी माँसे आज्ञा माँगी। माताने अपने पुत्रका विद्या-प्रेम देखकर ख़ुशीसे इजाज़त दे दी और चालीस अशर्फ़ियाँ लड़केके कुर्तेमें बग़लके नीचे होशियारीसे सी दीं, जिससे

ज़रूरतके वक़्त काम आवें। चलते वक़्त माँने उपदेश दिया—'बेटा जा, तुझे ईश्वरको सौंपा। देख, सदा सच बोलना और ईश्वर को कभी मत भूलना।'

हज़रत ग़ौसुल एक क़ाफ़लेके साथ हो लिये। रास्तेमें डाकुओंके एक गिरोहने क़ाफ़लेको लूट लिया। एक डाकू उनके पास आकर बोला—'ओ लड़के, तेरे पास कुछ है कि नहीं ? बता !' इन्होंने जवाब दिया—'मेरे पास चालीस अशर्फ़ियाँ हैं।' डाकूने पूछा—'कहाँ हैं ?' जवाब मिला—'कुर्तेमें बग़लके नीचे सिली हुई हैं।'

डाकू इसे मज़ाक़ समझकर चल दिया। थोड़ी देरमें दूसरा डाकू आया। उसे भी वही जवाब मिला। डाकू उन्हें अपने सरदारके पास ले गया, और सारा हाल कह सुनाया। सरदारने कहा—'अच्छा, इसकी अशर्फ़ियाँ निकालो।' बताई हुई ज़गहसे ठीक चालीस चमकती हुई अशर्फ़ियाँ निकलीं।

सरदार हैरतमें आकर बोला—'लड़के, तू अजब तरहका आदमी है। तूने चोरोंको भी अपना माल बता दिया !' हज़रतने सिर झुकाकर कहा—'मेरी माँने चलते वक़्त मुझे नसीहत दी थी कि सदा सच बोलना और ईश्वरको कभी मत भूलना। मैंने अपनी माताकी आज्ञानुसार काम किया है, और कुछ नहीं।'

डाकुओंके सरदारके मन पर इसका बड़ा असर पड़ा। वह बड़ा पछताया। उसने सारा माल वापस कर दिया, और लूटमार छोड़कर भले रास्ते लगा।

विद्युच्चर

विद्युच्चर एक राजकुमार था, लेकिन बुरी सुहबतके असरसे वह डाकू बन गया। उसके गिरोहमें ५०० डाकू थे ! पिताने दुःखी होकर उसे

घरसे निकाल दिया। वह अपने गिरोहके साथ घूमता-फिरता एक नगरके पास पहुँचा। नगरके बाहर, घने जंगलमें पड़ाव डाल दिया गया और विद्युच्चर किसी मालदार असामीकी खोजमें नगरके अन्दर दाखिल हुआ।

उसने देखा कि नगरी खूब सजी हुई है और नगरवासी किसीके स्वागतकी तैयारीमें लगे हुए हैं। पूछनेपर मालूम हुआ कि नगरसेठके पुत्र जम्बुकुमार लड़ाई जीतकर आ रहे हैं, उन्हींके स्वागतकी तैयारियाँ हो रही हैं। कुछ देरमें जम्बुकुमारकी सवारी आ पहुँची। विद्युच्चर डाकूकी नज़र उनके गलेमें झूलते हुए बेशक़ीमती जवाहरातपर पड़ी। डाकूने अपने शिकारको भाँपा और मन-ही-मन उसके घर डाका डालनेका संकल्प करता हुआ अपने पड़ावकी ओर चला।

ज़म्बुकुमार अभी अविवाहित थे। बचपनसे ही उनका झुकाव वैराग्यकी तरफ़ था। घरमें रहते ज़रूर थे और दुनियादारीके फ़र्ज़ोंको भी पूरा करते थे लेकिन थे बिलकुल अनासक्त। उन्होंने कई बार घरबार छोड़कर साधु बन जानेका इरादा किया, मगर माँ-बापने मजबूर कर दिया। उनके पिताने यह सोचकर, कि संसारमें फँस जानेपर अपना पुत्र वैरागी न रह सकेगा, उनके विवाहका इन्तज़ाम किया। आठ रूपवती कन्याएँ चुनी गई। जम्बुकुमारने उन कन्याओंके पिताके पास ख़बर भेज दी कि 'विवाह होनेके दूसरे ही दिन मैं घरबार छोड़कर साधु बन जाऊँगा। इसलिए मेरे साथ अपनी कन्याओंको न ब्याहें।' लेकिन कन्याओंने अब दूसरा पति वरण करना स्वीकार न किया।

धूमधामसे विवाह हो गया।

जब जम्बुकुमार अपनी आठों स्त्रियोंके साथ अपने मकानमें मौजूद थे, विद्युच्चर डाकू कमन्दके ज़रिये खिड़कीपर पहुँचा और बातचीतकी आवाज़ सुनकर वहीं ठिठक गया। जम्बुकुमार अपनी पत्नियोंको धर्मोपदेश

दे रहे थे और कह रहे थे कि सूरज निकलते ही मैं दीक्षा ले लूँगा। जम्बुकुमारके सदुपदेश और भरी जवानीमें अपार दौलत और बेहद ख़ूबसूरत आठ युवतियोंके त्यागनेकी बातने खिड़कीपर बैठे हुए डाकूके दिलकी आँखें खोल दीं।

जब सुबह हुई और जम्बुकुमार घर-बार छोड़कर वनकी ओर चले, तब विद्युच्चर भी उनके पीछे-पीछे हो लिया। जम्बुकुमार मुनि हुए। और अपने पाँच सौ साथियों समेत विद्युच्चर भी अपने दुष्कर्मोंका प्रायश्चित्त करनेके लिए उनकी शरणमें जाकर साधु बन गया।

सन्त सादिक़

अरब देशमें सादिक़ नामके एक बहुत बड़े साधु थे। सब उनको आदर और प्रेमकी नज़रसे देखते थे। उस मुल्कका राजा मंसूर उनकी अक़्ल और इज़्ज़त देखकर मन-ही-मन जला करता था। उसने अपने मन्त्रीको हुक्म दिया—'जाओ, सादिक़को पकड़कर लाओ। मुझे आज उसका ख़ून करना हैं।' ऐसा हुक्म सुनकर वज़ीर दंग रह गया। उसने मंसूरसे कहा—'जो आदमी बिलकुल एकान्तमें रहता है। सारा वक़्त तप करनेमें गुज़ारता है, जो दुनियाकी कोई चीज़ नहीं चाहता, उसके लिए ऐसा हुक्म ?'

राजा बोला—'नहीं, उसे फ़ौरन लाकर हाज़िर करो।' मन्त्रीने बहुत समझाया मगर राजा न माना। आख़िर मजबूर होकर वह उसे बुलाने गया।

राजाने अपने नौकरसे कह रखा था कि सादिक़के आ जाने पर जब मैं अपने सरसे ताज उतारूँ तब तुम उसे क़त्ल कर देना।

जब सादिक़ मंसूरके पास पहुँचे तब वह विनीत भावसे उनका स्वागत करने सामने आया। बड़े आदरसे उन्हें तख़्त पर बिठाया और

खुद नम्रतासे नीचे बैठा। नौकरको यह देखकर ताज्जुब हुआ। मंसूरने सादिक़से पूछा—'बोलिए आपकी क्या इच्छा है?' सादिक़ बोले—'मैं बस यही चाहता हूँ कि अब फिर मुझे बुलाकर मेरी तपस्यामें विघ्न न डालना!'

मंसूरने उनकी यह माँग मंजूर की और उन्हें इज्ज़तके साथ विदा किया। उनको विदा करके मंसूर थर-थर काँपने लगा और बेहोश होकर गिर पड़ा। जब मंसूरको होश आया तो वज़ीरने पूछा—'तुम्हें यह कैसे हुआ?' मंसूर बोला—'जब सादिक़ मेरे कमरेके दरवाज़ेके आगे आकर खड़े हुए तब उनके साथ मैंने एक भयानक साँप देखा। वह साँप अपना फन उठाकर मुझसे कहने लगा—'अगर तूने सादिक़का कुछ किया तो मैं तुझे काट खाऊँगा।' साँपको देखकर मैं डरके मारे सारी सीटी-पटाख़ भूल गया। मैंने उनसे माफ़ी माँगी और बेहोश होकर जा पड़ा।'

एक दिन सादिक़ निहायत उम्दा मलमलका कुरता पहनकर जा रहे थे। किसीने कहा—'आप सरीखे महान् साधुको ऐसा बारीक़ और कोमल कपड़ा शोभा नहीं देता।' सादिक़ने उस आदमीका हाथ पकड़ कर अपने कुरतेकी बाँहके अन्दर डाला। कुरतेके नीचेके मोटे चुभीले कपड़े पर उसका हाथ फिराते हुए सादिक़ने कहा—'मैं एक कपड़ा लोगोंको दिखलानेके लिए पहनता हूँ और दूसरा ख़ुदाके वास्ते पहनता हूँ।'

मज़हबी झगड़ा

सुल्तान हैदरअली बिलकुल अपढ़ था। धर्मके नामपर होनेवाले झगड़ोंसे उसे सख़्त चिढ़ थी।

एक बार शिया-सुन्नियोंमें झगड़ा हो गया। लड़ाई तक नौबत पहुँची। बात हैदरअलीके कानोंमें पड़ी। उसने दोनों पक्षोंको बुलाकर पूछा—

'तुम लोग एक दूसरेसे कुत्तोंकी तरह क्यों लड़ते हो ?'

हज़रत मुहम्मदके उन अनुयायियोंने अपनी-अपनी बात कही।

हैदरने पूछा—'जिस शख़्सके लिए तुम लड़ते हो, क्या वो ज़िन्दा हैं ?'

'नहीं।'

'जो मर गया, उसके लिए झगड़ना निहायत बेवक़ूफ़ी है। आइन्दा ऐसी हिमाक़त करके राज्यका वक़्त बिगाड़ोगे तो तुम्हें सख़्त सज़ा दी जायगी।'

समदर्शन

एक दफ़ा संत नामदेव खाना बना रहे थे। रोटियाँ बन चुकनेपर आप ज़रा कामसे कुछ देरके लिए कहीं चले गये। इतनेमें एक कुत्ता आया और रोटियाँ मुँहमें उठा कर भागा। उसी वक़्त नामदेव आ गये। और घी की कटोरी हाथमें लेकर यह कहते हुएकुत्तेके पीछे दौड़े कि, "भगवन्! रोटियाँ रूखी हैं, अभी चुपड़ी नहीं हैं, घी लगा लेने दीजिए फिर भोग लगाइए।'

अहंकार

एक आस्तिकका एक नास्तिक दोस्त था। एक दिन नास्तिक बोला—'तुम्हारा त्याग सचमुच बहुत बड़ा है। ईश्वरकी ख़ातिर तुमने दुनिया छोड़ रक्खी है।' आस्तिकने जवाब दिया—'भाई, तुम्हारा त्याग उससे भी बड़ा है। तुमने तो दुनियाकी ख़ातिर ईश्वर तकको छोड़ दिया है।'

हक़की रोटी

एक राजाके यहाँ एक सन्त आये और हक़की रोटी माँगी। राजाने पूछा—हक़की रोटी कैसी होती है ? महात्माने बतलाया कि 'आपके नगरमें एक बुढ़िया फ़लाँ मुहल्लेमें रहती है वह हक़की रोटीका मतलब बतावेगी।'

राजा उस बुढ़ियाके पास पहुँचे और बोले, 'माता मुझे हक़की रोटी चाहिए।'

बुढ़ियाने कहा, 'राजन्, मेरे पास एक रोटी है, उसमें आधी हक़की है और आधी बेहक़की।'

राजाने पूछा—'आधी बेहक़की कैसे ?'

बुढ़ियाने बताया—'एक दिन मैं चरखा कात रही थी। शामका वक़्त था अँधेरा हो चला था। इतनेमें एक जुलूस उधरसे निकला। उसमें मशालें जल रही थीं। मैं अलग चिराग़ न जला, उन्हींकी रोशनीमें कातती रही और आधी पौनी कात ली, आधी पौनी पहलेकी कती थी। उस पौनीसे आटा लाकर रोटी बनाई, इसलिए आधी रोटी हक़की है, आधी बेहक़की। आधीपर जुलूसवालेका हक़ है।'

राजाने सुनकर बुढ़ियाको सर झुकाया।

सच्चा ज्ञानी

एक बार एक पहुँचे पुरुष रानी-रासरमणिके कालीजीके मन्दिरमें आये, जहाँ परमहंस रामकृष्ण रहा करते थे। एक दिन उनको कहींसे भोजन न मिला। यद्यपि उनको बड़ी भूख लग रही थी, उन्होंने किसीसे भी भोजनके लिए नहीं कहा। थोड़ी दूरपर एक कुत्ता जूठी रोटीके टुकड़े खा रहा था। वे चट दौड़कर उसके पास गये, उसको छातीसे लगाकर बोले—'भैया ! तुम मुझे बिना खिलाये क्यों खा रहे हो ?' फिर उसीके साथ खाने लगे। भोजनके अनन्तर वे फिर कालीजीके मन्दिरमें चले आये, इतनी भक्तिसे माताकी स्तुति करने लगे कि सारे मन्दिरमें सन्नाटा छा गया। जब वे जाने लगे तो रामकृष्ण परमहंसने अपने भतीजे हृदय मुकर्जीसे कहा—'बच्चा ! इस साधुके पीछे-पीछे जाओ और जो वह कहे, मुझसे आकर कहो।' हृदय उसके पीछे-पीछे जाने लगा। साधुने घूमकर

उससे पूछा कि 'मेरे पीछे-पीछे क्यों आ रहा है ?' हृदयने कहा–'महात्माजी ! मुझे कुछ शिक्षा दीजिए ।' साधुने उत्तर दिया—'जब तू इस गन्दे घड़ेके पानीको और गङ्गाजलको समान समझेगा और जब इस बाँसुरीकी आवाज़ और इस जन-समूहकी कर्कश आवाज़ तेरे कानोंको समान मधुर लगेगी, तब तू सच्चा ज्ञानी बन सकेगा ।'

हृदयने लौटकर श्रीरामकृष्ण परमहंससे कहा । श्रीपरमहंस बोले—'उस साधुको वास्तवमें ज्ञान और भक्तिकी कुञ्जी मिल चुकी है । पहुँचे हुए साधु समदर्शी होते हैं ।'

भय !

एक बार गुरु मच्छिन्द्रनाथ अपने शिष्य गोरखनाथके साथ कहीं जा रहे थे । रास्तेमें गुरुने अपनी झोली शिष्यको ले चलनेके लिए दे दी । गोरखनाथको वह झोली भारी-भारी लगी । चुपकेसे देखा तो सोनेकी ईटें !

आगे चलकर गुरुने मुड़कर शिष्यसे पूछा—'बेटा, हमे इस निर्जन वनमेसे होकर जाना है, रास्तेमें कुछ भय तो नहीं है ?'

गोरखनाथ बोले—'गुरुजी, भयको तो मै कभीका रास्तेमे फेंक आया हूँ, आप निश्चिन्त होकर चले चलिए ।'

सहनशीलता

पुराने ज़मानेमें किसी शहरमें एक वृद्ध महात्माको किसी झूठे इलज़ाममें पकड़कर कोड़े लगाये जा रहे थे । लेकिन महात्मा शान्त और अविचल भावसे सहन किये जा रहे थे ।

एक सज्जनने यह दृश्य देखा । पास जाकर पूछा—'महाराज ! आप तो इतने वृद्ध और दुर्बल हैं फिर भी ऐसी सख़्त मारको शान्त भावसे कैसे सह रहे है ?'

महात्मा बोले—'विपत्तिको आत्मशक्तिसे सहा जाता है, शरीर-बलसे नहीं ।'

प्रार्थना

हे प्रभो, मेरी यह प्रार्थना नहीं है कि संकटके समय मेरी रक्षा करो, मैं तो केवल यह चाहता हूँ कि संकटोंसे डरकर भागूँ नहीं। मैं यह नहीं चाहता कि दुःख सन्तापसे मेरा चित्त व्यथित हो जाय तो तुम मुझे सान्त्वना दो, बल्कि यह कि मुझे दुःखोंपर विजय प्राप्त करनेकी शक्ति दो।

आवश्यक सहायता न मिलनेपर हिम्मत न हारूँ, मेरा बल क्षीण न हो जाय, बस यही चाहता हूँ।

व्यवहारमें हानि उठानी पड़े, या लोग मुझे लूट लें, इसकी मुझे परवाह नहीं; लेकिन हिम्मत हारकर मैं यह कहते हुए रोने न बैठूँ कि 'हाय मेरा सर्वस्व जाता रहा, अब मैं क्या करूँ ?' बस इतना ही चाहता हूँ।

—रवीन्द्रनाथ टैगोर

जैसी भावना वैसी सिद्धि

भगवान् बुद्धका कथन था कि जैसी भावना रखोगे वैसे बनोगे।

उनके पास दो आदमी आये। एकने पूछा—'महाराज, मेरे इस साथीकी क्या गति होगी। यह कुत्ता सरीखे विचार और कर्म किया करता है। क्या अगले जन्ममे यह कुत्ता नहीं होगा ?'

दूसरा बोला—'यह बिलकुल बिल्ली सरीखा है। क्या अगले जन्ममें यह बिल्ली नहीं होगा ?'

बुद्ध बोले—'भाइयो ! जैसे तुम्हारे संस्कार होंगे वैसा फल मिलेगा। जो किसीको कुत्ता समझता है वह स्वयं कुत्ता बनेगा; जो किसीको बिल्ली समझता है वह स्वयं बिल्ली बनेगा।'

वेतन-वृद्धि !

एक बार श्री रविशंकर महाराजको खबर हुई कि शिक्षकोंमें उग्र असन्तोष फैल रहा है और यदि उनके वेतनमे वृद्धि न हुई तो वे मनोयोग पूर्वक काम नहीं करनेवाले। इसलिए उन्होंने आश्रमके सब शिक्षकोंको

बुलाकर कहा—"आज मैं आप लोगोंको एक खुशखबर सुनाता हूँ। कलसे आपका वेतन दस रुपया बढ़ जानेवाला है। शिक्षक सुनकर गद्‌गद हो गये और आनन्दसे तालियाँ बजाने लगे। फिर महाराजने पूछा—'बताइए आपमेंसे कितने बीड़ी पीते हैं ?' लगभग सबने हाथ ऊँचा कर दिया। आगे पूछा—'रोज़ कितनी बीड़ी पीते हैं ?' जवाब मिला–'दो चार आनेकी।'

महाराजने कहा—'अच्छा। और चाय कौन-कौन पीते हैं ?'

'सब ही !'

'तो अगर आप सब चाय और बीड़ी छोड़ दें तो आपका वेतन दस रुपया बढ़ जाता है या नहीं ? और इस प्रकार आप सुसंस्कारी भी बनेंगे और बालकोंको बुरी आदतोंसे दूर भी रख सकेंगे।'

यश-तृष्णा

राजा भोजके दरबारमें एक धनपाल नामक जैन पण्डित थे। कहा जाता है कि वर्षोंके परिश्रमके बाद उन्होंने बाणकी कादम्बरीका प्राकृतमें अनुवाद किया था। राजाने धनपालसे कहा—'इस ग्रन्थके साथ मेरा नाम जोड़ दो तो यथेच्छ स्वर्णमुद्राएँ दूँ।' धनपाल धर्माचारी थे। उन्होंने नम्र दृढ़ता पूर्वक राजाकी बात माननेसे इनकार कर दिया।

अपना ही आश्रित पण्डित ऐसी गुस्ताख़ी करे ! राजाने आगबबूला होकर सारा अनुवाद जला दिया ! धनपालको बड़ा दारुण दुःख हुआ। खाना-पीना तक छूट गया। यूँ उन्हें उदासीन देखकर उनकी पुत्रीने पूछा—'पिताजी, शोकमग्न क्यों रहा करते हैं ? मुझे तो बताइए !'

धनपालने सारा क़िस्सा सुना दिया। पुत्री बोली—'अरे, इसमें क्या है ! आपकी पाण्डुलिपि अल्पविराम सहित मुखाग्र है मुझे। आप लिखिए, मैं बोलती जाती हूँ।'

कादम्बरी प्राकृतमें तैयार हो गई। पुत्रीकी इस अद्भुत शक्तिसे धनपाल इतने मुग्ध हुए कि उसीके नामपर उस पुस्तकका नाम 'तिलक-मंजरी' रख दिया।

४

आनन्द

न्यायमूर्ति रानाडेको क़लमी आम बहुत पसन्द थे। एक बार आमोंकी टोकरी आई। रमाबाईने आम काटकर न्यायमूर्तिके सामने तश्तरीमें रखे। उन्होंने उनमेंसे एक-दो फाँक खाई। कुछ देर बाद रमाबाईने आकर देखा तो आमकी फाँकें रखी हुई हैं। उन्हें अच्छा नहीं लगा। वे बोलीं—'आपको आम पसन्द हैं, इसलिए मैं इन्हें काटकर लाई। आप खाते क्यों नहीं ?'

रानाडे बोले—'आम अच्छे लगते हैं इसके क्या ये मानी है कि आम ही खाता रहूँ। एक फाँक खा ली। जीवनमें दूसरे आनन्द भी तो हैं।'

सात अवसर

सात मौक़ोंपर मैंने अपनेको क्षुद्र बनते देखा—

१. जब मैं आदमीके आगे नम्र रंक बना, इस आशासे कि इससे दुनियामें बुलन्दी-मर्तबा हासिल करूँगा।

२. जब मैं कमज़ोरोंके सामने घमंडसे अकड़ कर चलने लगा। मानो मेरी शक्ति मेरे विकासका एक अंश न होकर दुर्बलोंपर रौब जमानेका एक ज़रिया हो।

३. कठिनाइयोंसे भरे कर्तव्य-क्षेत्र और सुगम सस्ते सुखमेंसे एकको चुननेका अवसर आनेपर जब मैंने सरलतासे मिलनेवाला सस्ता सुख चुना।

४. जब मैंने अपराध करके उसका पश्चात्ताप और परिमार्जन करनेके बजाय उसका समर्थन करते हुए कहा— 'ऐसा तो चला ही करता है। दूसरे भी तो यही करते हैं।'

५. जब अपनी कमज़ोरीको मैंने बरदाश्त कर लिया। इतना ही नहीं—उसीमें भक्ति मान ली।

६. जब मैंने कुरूप चहरेकी ओर नफ़रत भरी नज़रसे देखा, मगर यह नहीं जाना कि नफ़रतका ही एक पर्दा यह कुरूपता है।

७. जब किसीसे अपनी तारीफ़ सुनकर मैंने समझा कि सचमुच मैंने अच्छा काम किया है। दूसरोंकी तारीफ़को अच्छाईकी कसौटी मान लेना—यह तो हद हो गई!

इस तरह सात अवसरोंपर मैंने अपनेको क्षुद्र बनते देखा।

सूफ़ी सन्त ग़ज़्ज़ाली

सूफ़ियोंमें सबसे बड़ा दार्शनिक ग़ज़्ज़ाली हुआ है। एक दिन उसे लगा कि सारी सम्पत्तिको तिलाञ्जलि दे देनी चाहिए। वह कहता है—'मैंने कर्मोंपर ध्यान दिया तो मुझे मालूम हुआ कि सबसे मुख्य विद्यादान और अध्यापन कर्म हैं; लेकिन जिस वक़्त मुझे यह मालूम हुआ कि मैं कुछ ऐसी विद्याओंको पढ़ रहा हूँ जो मोक्षकी दृष्टिसे सार-रहित हैं तो मेरे आश्चर्यकी सीमा न रही। जब मैंने यह विचार किया कि दूसरोंको किस लिए उपदेश देता हूँ तो जाना कि दर असल ईश्वरीय कर्म करनेके बजाय मैं अब तक नामवरी और वाह-वाहीकी निरर्थक कामनासे प्रेरित था। एक ओर सांसारिक तृष्णा मुझे झमेलेमें डालना चाहती थी, दूसरी ओर धर्मकी ध्वनि मेरे कानोंमें कह रही थी—'उठो उठो! तुम्हारे जीवनका अन्त निकट आ रहा है और तुम्हें अभी लम्बी यात्रा करनी है। तुम्हारे कल्पित दानका अहंकार मिथ्या है। अगर तुम आज बन्धन काटना नहीं चाहते तो कब काटोगे?'

ग़ज़्ज़ालीके मनपर इन विचारोंका ऐसा प्रभाव पड़ा कि उसने धर्माचार्यका उच्चपद त्याग दिया और सीरिया चला गया। वहाँ उसने दो

वर्षतक आत्मिक ज्ञान प्राप्त करनेका प्रयत्न किया; लेकिन उसका प्रयास निष्फल हुआ। अन्तमें उसने सूफ़ियोंका आश्रय लिया और मनोवांछित फल पाया। सूफ़ियोंसे उसने मनकी शुद्धि और ईश्वराराधनके मार्ग सीखे।

जिस समय ग़ज़्ज़ाली मरने लगा तो उसने अपना कफ़न मँगवाया, उसको दोनों हाथोंमें लेकर चूमा, अपनी आँखोंसे लगाया और अन्तमें अपने पैर फैलाकर लेट रहा।

ग़ज़्ज़ाली लिखता है कि 'सूफ़ियोंके जीवनसे अधिक सुन्दर, उनके सद्व्यवहारसे अधिक श्लाघनीय और उनके सदाचारसे अधिक पवित्र कोई वस्तु नहीं है। उनका उद्देश्य विषयोंके कठोर बन्धनसे मनको मुक्त करना और बुरी वासनाओं और संकल्प-विकल्पोंसे मनको बचाना है, ताकि शुद्ध हृदयमें केवल परमात्माके वास और उसके आराधनके लिए स्थान हो सके।'

सूफ़ियोंकी ज़िन्दगी सत् चित् और आनन्दकी खोजमें बीतती है। वह इस सिद्धान्तमें अटल विश्वास रखते हैं कि—'यहाँ भी तू वहाँ भी तू, ज़मीं तेरी फ़लक तेरा।' मीरांके समान सूफ़ी तपस्विनी रबिया कहती है कि, 'ईश्वरके प्रति भक्ति मुझे शैतानके प्रति घृणा करनेका अवकाश नहीं देती।'

दावत

एक बार सुक़रातने कुछ धनी लोगोंको भोजनपर बुलाया। उनकी पत्नीने कहा—'मुझे तो ऐसा मामूली खाना खिलानेमें लज्जा आयेगी।'

सुक़रात बोले—'इसमें लज्जाकी कोई बात नहीं। महमान अगर समझदार होंगे तो उन्हें खाना अरुचिकर नहीं लगेगा; अगर अरुचिकर लगा भी तो वह सहन कर लेंगे। और अगर वह बेवक़ूफ़ होंगे तो हमें शर्मिन्दा होनेकी ज़रूरत नहीं।'

वर्षण

एक दिन सुक़रातकी कर्कशा स्त्री उनसे झगड़ पड़ी। बड़ा गर्जन-तर्जन किया। लड़ाईकी पूर्णाहुति स्वरूप उसने सुक़रातपर गन्दा पानी डाल दिया। सुक़रात मुसकराते हुए बोले—'मैं जानता था तुम गरजनेके बाद बरसोगी भी।'

साधना

एक बार सुक़रातकी पत्नीने गुस्सेमे आकर उनका कोट फाड़ डाला। मगर वे शान्त रहे और पूर्ववत् मुसकराते रहे। उनका एक दोस्त, जो उनसे मिलने आया था, यह सब देखकर बोला—'आपने इनसे कुछ कहा क्यों नहीं?' सुक़रात बोले—'जैसे सईस बिगड़ैल घोड़ेको साधता है, मैं इसे सुधारनेकी कोशिश करता हूँ। दूसरे, इसकी बदमिज़ाजी झेलकर दुनियाका दुर्व्यवहार सहना सीखता हूँ।'

कैसी गुज़री

एक बादशाहने एक फ़कीरको बे-अदब समझकर पकड़वा लिया। उसे रातभर तालाबमें खड़ा रखा। और खुद रनवासमें रागरंगमें मस्त रहा। सुबह होनेपर उसने फ़क़ीरको दरबारमें बुलवाकर पूछा—'कहो उस्ताद! कैसी गुज़री?'

फ़क़ीर बोला—'कुछ तेरी-सी गुज़री, कुछ तेरे-से अच्छी गुज़री!'

ब्रह्मर्षि

परम प्रतापी क्षत्रिय नरेश तपस्वी विश्वामित्र 'राजर्षि' तो थे ही, 'ब्रह्मर्षि' बनना चाहते थे।

महर्षि वशिष्ठके 'ब्रह्मर्षि' मान लेनेपर उन्हें 'ब्रह्मर्षि' की पदवी मिल सकती थी।

विश्वामित्रने बड़ी तपस्या की, परन्तु वशिष्ठ उन्हें 'राजर्षि' ही कहते रहे।

विश्वामित्रका क्रोध जाग उठा। उन्होंने वशिष्ठजीके सभी पुत्रोंको मरवा डाला! परन्तु यह सब देखते हुए भी वशिष्ठ शान्त रहे। इधर विश्वामित्रने वशिष्ठको भी समाप्त कर देनेका संकल्प कर लिया।

सामनेके मुक़ाबलेमें तो विश्वामित्र कई बार मुँहकी खा चुके थे। इसलिए वशिष्ठकी हत्या करनेके इरादेसे वे रातको उनके आश्रममें पहुँचे।

× × ×

पूर्णिमाकी रात्रि थी। निर्मल आकाश, चारो ओर शान्ति छाई हुई थी। महर्षि वशिष्ठ अपनी पत्नी अरुन्धतीके साथ कुटियासे बाहर एक वेदिकापर विराजमान थे।

'कितनी साफ़ कितनी निर्मल चाँदनी है!' अरुन्धतीने कहा।

'ऐसी उजली जैसे विश्वामित्रकी तपस्याका तेज!'

वृक्षोंकी झुरपुटमें छिपे हुए विश्वामित्र यह सुनकर चौंक पड़े—'एकान्तमें अपनी पत्नीसे अपने शत्रुकी, अपने पुत्रोंके हत्यारेकी, प्रशंसा करनेवाले यह महापुरुष! और इनकी हत्याका संकल्प लेकर रातमें चोरकी तरह आनेवाला मैं नरपिशाच!'

महात्मा वशिष्ठके हृदयकी विशाल उदारताको देखकर विश्वामित्रका अन्तरंग बदल गया। उन्होंने अपने तमाम अस्त्र-शस्त्र फेंक दिये और दौड़कर वशिष्ठके सन्मुख ज़मीनपर जा पड़े—'मुझ अधमको क्षमा करें।'

पहचाने हुए स्वरको सुनकर अरुन्धती चकित हो गईं। महर्षि वशिष्ठ वेदीसे कूदे और चरणोंमें पड़े हुए व्यक्तिको उठानेके लिए झुकते हुए स्नेहपूर्ण कण्ठसे बोले—'ब्रह्मर्षि विश्वामित्र।'

उसको दे मौला

लखनऊका नवाब आसिफ़ुद्दौला बड़ा दानी था। उसके यहाँसे कोई खाली हाथ नहीं आता था। एक बार वह दरबारमें बैठा हुआ था कि उसके कानमें किसी फ़क़ीरके ये शब्द पड़े—

जिसको न दे मौला ।
उसको दे आसिफ़ुद्दौला ॥

नवाबने फ़क़ीरको बुलाया और उसे एक तरबूज़ भेंट दिया । बड़ी आशासे आया हुआ फ़क़ीर इस क्षुद्र दानसे असन्तुष्ट रहा । पर क्या करता, तरबूज लेकर चल दिया । रास्तेमें उसे एक और फ़क़ीर मिला । तरबूज़ देखकर उसके मुँहमें पानी छूटने लगा । उसने कहा—'तरबूज़ बेचोगे क्या ?' पहला फ़क़ीर तैयार हो गया और उसने दो पैसेमें वह तरबूज़ बेच डाला ।

दूसरे फ़क़ीरने घर आकर तरबूज़ तराशा तो उसमेंसे हीरा, मोती और माणिक निकले !

कुछ दिनों बाद पहला फ़क़ीर फिर नवाबके दरबारमें आया और फिर वह सदा लगाई—

'जिसको न दे मौला, उसको दे आसिफ़ुद्दौला ।'

'क्यों, वह तरबूज़ खाया था क्या ?' नवाबने पूछा ।

'नहीं, उसे तो मैंने दो पैसेमें बेच दिया था ।'

'अरे, अरे ! तुम बड़े कमनसीब हो ! उसमें जवाहिरात भरे थे !'

सुनकर फ़क़ीरको बेहद पश्चात्ताप हुआ । नवाबने कहा—'आइन्दा यह झूठी सदा न लगाना, बल्कि कहा करना कि—

'जिसको न दे मौला,
उसको न दे आसिफ़ुद्दौला ।
जिसको न दे आसिफ़ुद्दौला,
उसको दे मौला ॥'

निर्माता

जब नदीका पुल बन चुका तो उसके एक खम्भेपर खुदवाया गया—'यह पुल नवाब यूसुफ़यारजंगने बनवाया ।'

एक शाम एक सिलबिल आदमी वहाँ आया। उसने उस लिखावटको कोलतारसे पोत कर लिखा—'इस पुलके पत्थरोंको गधे ढोकर लाये थे। वे ही इसके बनानेवाले हैं। इस पुलपर चलनेवाले उन्हींका आभार मानें।'

लोगोंने जब यह पढ़ा तो कोई क़हक़हे लगाने लगे, कोई ताज्जुब करने लगे, कोई लिखनेवालेको ख़ब्ती बताने लगे।

लेकिन एक गधा, हँसकर, दूसरेसे बोला—'तुम्हें याद है न कि पत्थरोंको तो हमीं लाये थे। फिर भी अब तक यही कहा जाता रहा कि इस पुलको नवाब यूसुफ़यारजंगने बनवाया।'

पागल

एक पागलखानेके बाग़में मुझे एक युवक मिला जिसके ख़ूबसूरत और ज़र्द चहरेसे हैरतके आसार नुमायाँ थे।

मैं बेंचपर उसके पास बैठ गया और उससे पूछा—'आप यहाँ कैसे आये?'

उसने मुझे साश्चर्य देखा, और बोला—'यह एक अशोभन प्रश्न है, फिर भी मैं इसका जवाब देता हूँ। मेरे पिता मुझे अपनी प्रतिमूर्ति बनाना चाहते थे; मेरे चाचा भी। मेरी माँ मुझे अपने मशहूर पिताके समान बनाना चाहती थी। मेरी बहन चाहती थी कि मैं उसके जहाज़ी पतिके पूर्ण आदर्शका अनुगमन करूँ। मेरे भाईका ख़्याल है कि मैं उस जैसा अच्छा पहलवान बनूँ।

मेरे शिक्षक—दर्शनशास्त्री, संगीताचार्य, तर्कतीर्थ—भी निश्चित-मत थे कि मैं हूबहू उनके मानिन्द ही बनूँ।

इसलिए मैं इस जगह चला आया। यहाँ ज़रा समझदारीका वातावरण है। यहाँ कमसे कम, मैं अपनेपनमें तो रह सकता हूँ।'

तब एकाएक वह मेरी तरफ़ मुख़ातिब होकर पूछने लगा—'अब आप बताइए, क्या आपको भी नसीहत और नेकसलाहने खदेड़कर यहाँ पहुँचा दिया ?'

'ना, मैं तो दर्शक हूँ।'

वह बोला—'अच्छा, तो आप उन लोगोंमें-से हैं जो इस दीवालके दूसरी तरफ़ वाले पागलखानेमें रहते हैं।'

कपड़े

एक रोज़ सुरूपता और कुरूपता किसी समन्दरके किनारे मिलीं। और एक दूसरीसे बोलीं—'आओ समन्दरमें नहायें।'

उन्होंने कपड़े उतार दिये और पानीमें तैरने लगीं। कुछ देर बाद कुरूपता किनारेपर लौट आई और सुरूपताके कपड़े पहनकर चलती बनी।

सुरूपता भी समन्दरसे निकली। देखा कि उसके कपड़े ग़ायब हैं। मगर वह शर्मके मारे नंगी तो रह नहीं सकती थी, इसलिए उसने कुरूपताके कपड़े पहने और चल दी।

अब आजतक लोग कुरूपताको सुरूपता और सुरूपताको कुरूपता समझते हैं।

लेकिन कुछ ऐसे हैं जिन्होंने सुरूपताके चेहरेको देखा है और वे उसे उसके बदले हुए कपड़ोंमें भी जान जाते हैं। और कुछ ऐसे भी हैं जो कुरूपताके चहरेको जानते हैं और उसके कपड़ोंमें भी उसे देख लेते हैं।

ज्ञान और अर्ध-ज्ञान

एक नदीके किनारे तैरते हुए लट्ठेपर चार मेंढक बैठे हुए थे। एकाएक लट्ठा धारामें बह चला। मेंढक आनन्दसे मस्त हो गये। क्योंकि उन्होंने ऐसी जलयात्रा पहले कभी नहीं की थी।

बहुत देर बाद पहला मेंढक बोला—'सचमुच यह बड़ा ही अजीब लट्टा है। यह तो ज़िन्दोंकी तरह चलता है। ऐसा लट्टा पहले किसीने नहीं देखा।'

तब दूसरा मेंढक बोला—'नहीं, मेरे दोस्त, यह लट्टा और लट्टों जैसा ही है। यह नहीं चल रहा। चल तो नदी रही है समन्दरकी ओर, और हमें और लट्टेको अपने साथ लिये जा रही है।'

तीसरा मेंढक बोला—'न तो लट्टा चल रहा है और न नदी। गति तो हमारी विचारकतामें है। क्योंकि विचारके बग़ैर कोई चीज़ नहीं चलती।'

तीनों मेंढक इस बातपर झगड़ने लगे कि चल दरअसल कौन-सी चीज़ रही है। झगड़ा अधिकाधिक गर्मी और ज़ोर पकड़ता गया, लेकिन वे सहमत न हो सके।

तब उन्होंने चौथे मेंढककी ओर देखा, जोकि अबतक ध्यानसे सब सुन रहा था मगर शान्त था और उन्होंने उसकी राय माँगी।

चौथा मेंढक बोला—'तुममेंसे हर एक ठीक है, ग़लत कोई नहीं। गति लट्टेमें है और पानीमें है और हमारे विचारमें भी है।'

इसपर तीनों मेंढकोंको बड़ा ग़ुस्सा चढ़ा, क्योंकि कोई यह बात मानने-के लिए तैयार नहीं था कि उसीकी बात पूर्ण सत्य नहीं है और यह कि बाक़ी दोनोंकी बात सर्वथा मिथ्या नहीं है।

तब अजीब बात हुई तीनों मेंढक मिल गये और उन्होंने चौथे मेंढकको ढकेलकर नदीमें गिरा दिया।

शेरकी बेटी

एक बूढ़ी रानी अपने सिंहासनपर सोई हुई थी। चार ग़ुलाम खड़े हुए उसे पंखा झल रहे थे और वह ख़ुर्राटे ले रही थी। रानीकी गोदमें एक बिल्ली पड़ी लापरवाहीसे ग़ुलामोंको तरफ़ घूर रही थी।

पहला गुलाम बोला—'यह औरत सोती हुई कैसी बदशक्ल लगती है। इसका मुँह देखो कैसा लटका हुआ है; साँस तो ऐसे ले रही है मानो शैतान उसका हलक़ दबोच रहा हो।'

इसपर बिल्ली बोली—'यह सोती हुई इतनी बदशक्ल नहीं लगती जितने तुम जगे हुए गुलाम लगते हो।'

दूसरा गुलाम बोला—'कोई बुरा ख़्वाब देख रही मालूम होती है।'

बिल्ली बोली—'क्या ही अच्छा हो कि तुम भी सोकर अपनी आज़ादीके ख़्वाब देखो।'

तीसरा गुलाम बोला—'शायद अपने क़त्ल किये हुए लोगोंका जुलूस देख रही है।'

बिल्ली बोली—'हाँ, तुम्हारे पुरखों और तुम्हारी सन्ततिका जुलूस देख रही है।'

चौथा गुलाम बोला—'इसकी चर्चा करते हुए भी, मुझे तो खड़े-खड़े पंखा झलनेमें कंटाला आता है।'

बिल्ली बोली—'क़यामत तक तुम तो पंखा ही झलते रहोगे; क्योंकि जैसा यह-लोक वैसा ही वह-लोक है।'

इस वक़्त रानीका सिर हिला, और उसका ताज ज़मीनपर गिर पड़ा।

एक गुलाम बोला—'यह तो अपशकुन है।'

बिल्ली बोली—'एकका अपशकुन दूसरेका शुभ शकुन है।'

दूसरा गुलाम बोला—'अगर यह जाग गई और अपने ताजको गिरा हुआ देख लिया, तो हमें मार ही डालेगी।'

बिल्ली बोली—'तुम्हारे जन्मसे ही वह तुम्हें रोज़ मारती आ रही है और तुम्हें इसकी ख़बर भी नहीं।'

तीसरा गुलाम बोला—'हमें मार डालेगी और कहेगी कि देवताओंको बलि चढ़ा दी।'

बिल्ली बोली—'केवल दुर्बलोंकी ही बलि दी जाया करती है।'

चौथे ग़ुलामने सबको चुप करके धीमेसे ताज उठाया और बिना उसे जगाये, बूढ़ी रानीके सिरपर रख दिया।

बिल्ली बोली, 'सिर्फ़ ग़ुलाम ही गिरे हुए ताजको फिर उठाकर रखता है!'

कुछ देर बाद रानी जगी, अपने चारों तरफ़ देखा और जम्हाई ली। तब बोली—'मैं सपना-सा देख रही थी, कि किसी पुराने शाहबलूतके पेड़के तनेपर चार केंचुए जा रहे हैं और एक बिच्छू उनके पीछे चक्कर काट रहा है। मुझे अपना सपना अच्छा नहीं लगा।'

उसने आँखें बन्द कर लीं और फिर सो गई और ख़ुर्राटे भरने लगी और ग़ुलाम उसे पंखा झलते रहे।

बिल्ली बोली—'झले जाओ, झले जाओ, अहमक़ो। तुम उस आगको पंखा झल रहे हो जो तुम्हें भस्म कर रही है।'

न्यायाधीश

दिल्लीका बादशाह ग़यासुद्दीन मुहम्मद एक बार तीरन्दाज़ीकी मश्क़ कर रहा था कि एक तीर किसी लड़केको लगा और वह मर गया!

लड़केकी माँने क़ाज़ीके यहाँ फ़रियाद की।

क़ाज़ीने हुक्म निकाल दिया कि बादशाह एक मुजरिमके तौरपर अदालतमें हाज़िर हों।

बादशाह अदालतमें हाज़िर हुआ और मुजरिमके कठघरेमें खड़ा कर दिया गया।

क़ाज़ी—'इस शिकायतके ख़िलाफ़ तुम्हें कुछ कहना है?'

बादशाह—'नहीं। मैं अपना जुर्म क़बूल करता हूँ। और मुआवज़ेके तौर पर अपनी जान तक देनेके लिए तैयार हूँ।'

यह सुनकर फ़रियादी औरत बोल उठी—'क़ाज़ी साहब, मुझे न्याय मिल गया। मुझे अब कुछ नहीं चाहिए।'

अदालत बरख़ास्त हो गई।

रास्तेमें बादशाह बोला—'क़ाज़ी साहब, अगर आज आपने इन्साफ़ न दिया होता तो मैं इस तलवारसे·······।'

क़ाज़ी फ़ौरन् अपना डंडा दिखाकर बोला—'और और आपने-अपने जुर्मका इक़बाल न किया होता तो मैं आपकी हड्डियाँ तोड़ देता।'

उपाधियाँ

इंग्लैण्डका बादशाह जेम्स अपना ख़ज़ाना भरनेके लिए उपाधियाँ बेचा करता था। वह जानता था कि किसी उपाधि या लक़बसे कोई महान् नहीं बन जाता; महान् बननेके लिए तो सद्‌गुण चाहिएँ। मगर वह मूर्ख लोगोंकी तुच्छ अहंकार-वृत्तिका पोषण करके फ़ायदा उठाता था।

एक रोज़ एक मान चाहनेवाला उसके दरबारमें आया।

'आपको कौन-सी उपाधि चाहिए ?'

'मुझे 'सज्जन' बना दीजिए।'

'मैं आपको लॉर्ड, ड्यूक, वग़ैरह बना सकता हूँ, लेकिन सज्जन बना सकना मेरी ताक़तसे बाहर है।'

आख़िरी उपदेश

यूनानके महात्मा अफ़लातूनने मरते वक़्त अपने सब बालकोंको बुलाकर कहा—

१. क्षमा—किसीने तुम्हारे ख़िलाफ़ कुछ कहा हो या किया हो उसे भूल जाना।

२. निरहंकार—अपने किये उपकारको भूल जाना।

३. विश्वास—यह बात दिलकी दीवारपर लिखकर रखना कि कोई भला-बुरा नहीं कर सकता; जो करता है सो सिरजनहार करता है।

४. वैराग्य—एक दिन सबको मरना है यह हमेशा याद रखना।

भूखा भगवान्

नारदने भगवान्से पूछा—'भगवन्! आप संसारके समस्त ऐश्वर्य-के स्वामी होकर भी भर पेट भोजन क्यों नहीं करते?'

भगवान् बोले—'नारद! अगर मैं पेट भरकर खाऊँ तो दुनियामें भूखों मरते लोगोंका दुःख न जान सकूँ, इसलिए मैं पेट भरकर नहीं जीमता।'

अज्ञात सेवा

मूर युद्धमें सेनापति सिडनी घायल होकर ढह पड़ा।

उसी वक़्त वहाँ एक सिपाही आ पहुँचा। प्रतिपक्षी सैनिकोंने उसका तलवारोंसे मुक़ाबला किया। सिपाहीने वीरतापूर्वक उनके प्रहारोंका जवाब दिया और सिडनीको उठाकर घोड़ेपर बिठाकर दुश्मनोंके वारोंका मुक़ाबला करता हुआ छावनीपर पहुँच गया।

अशक्त सिडनीने धीमेसे पूछा—'सिपाही, तेरा नाम क्या है?'

साहसी सैनिकने विनयपूर्वक जवाब दिया—'माफ़ करें साहब, मैंने नाम या इनामके लिए यह काम नहीं किया।'

यह कहकर वह सेनापतिको तम्बूमें सुलाकर सरीता हुआ चला गया!

बादमें सिडनीने उस सिपाहीकी बड़ी तलाश की, मगर उसका पता न लगा।

विशाल दृष्टि

चू प्रदेशके राजकुमारका धनुष खो गया। सिपाहियोंने कहा—'अगर हुज़ूरका हुक्म हो तो हम उसे पातालसे भी ढूँढ़ कर ले आयें।'

राजकुमारने कहा, 'ऐसा करनेकी क्या ज़रूरत है? आख़िर मेरा धनुष चू प्रदेशके ही किसी बाशिन्देके पास होगा न? भले ही देशकी चीज़ देशवासीके पास रहे।'

यह बात जब महात्मा कन्फ़्यूशियसने सुनी तो वे बोले—'राजकुमारकी दृष्टि संकुचित है, वर्ना वे कहते कि, 'भले ही आदमीकी चीज़ आदमीके पास रहे।'

दो दोस्त

दो दोस्त अर्सेके बाद बुढ़ापेमें मिले।

'तुम्हारी उम्र कितनी हो गई?'

'ख़ुदाका शुक्र है कि मैं बिलकुल तन्दुरुस्त हूँ।'

'संसार-व्यवहार ठीक चल रहा है?'

'ख़ुदाका शुक्र है कि मैं किसीका देनदार नहीं।'

'किसी क़िस्मकी फ़िक्र तो नहीं रहती?'

'ख़ुदाका शुक्र है कि मेरे कोई छोटे बच्चे नहीं हैं।'

'कोई दुश्मन तो नहीं है?'

'ख़ुदाका शुक्र है कि मेरा कोई नज़दीकी रिश्तेदार नहीं है।'

—'अरेबियन विज़डम'

एकान्त और एकाग्रता

माइकेल एंजेलोसे एक मित्रने पूछा—'तुम ऐसा एकान्त जीवन क्यों गुज़ारते हो ?' उस कला-विधायकने जवाब दिया कि, 'कला और असाधारणता ईर्ष्यालु प्रिया है। वह मनुष्यका अनन्य प्रेम चाहती है।'

डिज़राइलीके कथनानुसार जब वह सिस्टाइन मन्दिरपर काम करता था तब उसने घरके भी किसी आदमीसे न मिलनेका नियम रखा था !

लात

सुक़रात बड़े सत्यभक्त और स्पष्टवक्ता थे। सत्य अप्रिय होता है। और अप्रिय सत्यके कहनेवाले और सुननेवाले दुर्लभ होते हैं। एक बार सुक़रातकी साफ़गोई पर किसीने उन्हें पीट दिया। मगर सुक़रातकी पेशानी पर शिकन तक न आई। एक मित्र चकित होकर बोला—'आप मार खाकर भी चुप रह गये !'

सुक़रात—'अगर मुझे गधा लात मारे तो क्या मैं भी उसके लात मारूँ ?'

भजनका अधिकार

एक युवक विरक्त होकर एक सन्तके पास पहुँचा। भगवद्‌भजनकी प्रबल इच्छा थी।

सन्तने कहा—'तुम स्नान करके शुद्ध होकर आओ।'

युवक स्नान करने गया, और सन्तने आश्रमके पास झाड़ू देती हुई भगिनको बुलाया। वे बोले—'यह युवक जब स्नान करके लौटे तब तुम इस तरह झाड़ू लगाना कि उसपर धूल उड़कर आये। लेकिन ज़रा सावधान रहना वह मारने दौड़ सकता है।'

जब युवक लौटा तो भंगिन जान-बूझकर ज़ोरसे झाड़ू लगाने लगी। धूल उड़कर युवकपर आने लगी। उसने ग़ुस्सेमें आकर पत्थर उठाया और भंगिनको मारने झपटा। भंगिन असावधान नहीं थी। झाड़ू फेंककर दूर भाग गई। युवक जो मुँहमें आया बकता रहा।

दुबारा स्नान करके वह महात्माके पास आया। सन्तने उससे कहा—'तुम तो पशुकी तरह मारने दौड़ते हो। अभी तुम भजनके लायक़ नहीं।' एक वर्ष बाद आना। एक वर्ष तक नाम-जप करते रहो।'

वर्ष पूरा करके युवक फिर सन्तके सामने हाज़िर हुआ। साधुने उससे फिर स्नानकर आनेके लिए कहा। और उधर भंगिनसे बुलाकर कहा कि 'इस बार इसके लौटनेपर इस तरह झाड़ू देना कि झाड़ू इससे छू जाय। डरना मत। मारेगा नहीं। कुछ कहे तो चुपचाप सुन लेना।'

भंगिनने आज्ञाका पालन किया। युवकको ग़ुस्सा तो बहुत आया, मगर सिर्फ़ कुछ कठोर वचन कहकर फिर स्नान करने चला गया।

जब वह सन्तके पास पहुँचा तो वे बोले—'अभी भी तुम भूँकते हो। एक वर्ष और नाम-जप करो, तब आना।'

एक वर्ष और बिताकर युवक सन्तके पास आया। पहलेकी तरह फिर स्नान करके आनेकी आज्ञा मिली। और भंगिनको आदेश दिया कि इस बार कूड़ेकी टोकरी उलट देना उसपर।'

भंगिनके कूड़ा डालनेपर युवक न केवल शांत रहा बल्कि भंगिनके सामने ज़मीनपर मस्तक टेककर हाथ जोड़ कर बोला—'देवी! तुम मेरी गुरु हो। तुम्हारी ही कृपासे मैं अहंकार और क्रोधको जीत सका!'

दुबारा स्नान करके जब युवक सन्तके पास पहुँचा तो उन्होंने उसे हृदयसे लगा लिया। बोले—'अब तुम भजनके अधिकारी हुए।'

५

आनन्दका मूल्य

'स्वामीजी, मैं बहुत दुखी हूँ; मुझे आनन्दका मूलमंत्र बताइए। नहीं तो मैं अपनी ज़िन्दगीको खत्म कर दूँगी।' न्यूयार्ककी एक धनी महिलाने, जिसके एक-पर-एक तीन पुत्र मर गये थे, शोकार्त वाणीमें स्वामी रामतीर्थसे निवेदन किया और घुटने टेक स्वामीजीके सामने बैठ गई।

उन दिनों स्वामी रामतीर्थ अमेरिकामें अद्वैत दर्शनपर भाषण कर रहे थे। उनके भाषण और आचरणसे प्रभावित अमेरिकावासी उन्हें 'मूर्तिमन्त आनन्द' और 'जीवित ईसामसीह' कहते थे।

स्वामीजी बोले—'राम तुम्हें आनन्दका मंत्र ज़रूर देगा, मगर उसके लिए तुम्हें माक़ूल क़ीमत अदा करनी होगी।'

महिला आशान्वित होकर बोली—'मेरे पास धन-दौलतकी कमी नहीं, आप जो फ़रमायेंगे दूँगी।'

'रामके परमानन्दमय साम्राज्यमें इस फ़ानी दौलतकी कुछ क़ीमत नहीं, राम इससे भी बड़ी क़ीमत तुमसे माँगता है!'

'स्वामीजी, आप कहिए तो, मैं हर क़ीमतपर वह आनन्द प्राप्त करना चाहती हूँ।'

'तो फिर, रामके साम्राज्यमें भी आनन्दका क्या अभाव है!' कहते हुए स्वामीजीने एक अनाथ हब्शी बालक महिलाको देते हुए कहा—'लो, इसे पुत्रवत् पालना। यह स्वयं रामका आत्म-स्वरूप है।'

महिला यह सुनकर काँप गई। बोली—'स्वामीजी, यह तो बड़ा हीन काम है! यह मैं कैसे कर सकूँगी?'

'तो फिर आनन्दकी प्राप्ति भी तुम्हारे लिए कैसे मुमकिन हो सकती है!' स्वामीजीने सरल भावसे कहा।

नास्तिक

एक नास्तिक हमेशा किसी-न-किसी बातपर ईश्वरको कोसा करता। एक बार उसके खेतमें आलूकी फ़सल बहुत अच्छी हुई। लोगोंने सोचा इस बार उसे खुदाके खिलाफ़ शिकायतकी कोई वजह न मिल सकेगी। लेकिन अपने किसी दोस्तके सवालके जवाबमें नास्तिकने कहा—'यह परमात्मा भी कितना निर्दयी है ! हाय ! मेरी समझमें नहीं आ रहा है कि इस बार अपने सूअरोंको खिलानेके लिए सड़े आलू कहाँसे लाऊँगा !'

तीसरा विश्वयुद्ध

मान लेता हूँ कि तीसरा विश्वयुद्ध होगा, मगर मैं यह नहीं बता सकता कि उसमें किन हथियारोंका उपयोग किया जायगा। हाँ, चौथे विश्वयुद्धके बारेमें निश्चय-पूर्वक यह कह सकता हूँ कि वह 'पत्थरकी गदा' से लड़ा जायेगा।

—अलबर्ट आइंस्टीन

कौन जीता ?

कौशल देशके राजा बड़े दानेश्वरी थे। उनकी दान-शीलताका यश दूर-दूर तक फैला हुआ था। दुखी लोग उन्हें अपना माँ-बाप समझकर दौड़े आते।

कौशलराजकी यह कीर्ति महाराजा काशीराजको सहन न हुई। उन्होंने कौशलपर चढ़ाई कर दी। कौशलराज हारकर जंगलमें भाग गये।

लोगोंमें हाहाकार मच गया। सब कहने लगे, 'राहु चन्द्रको निगल गया। लक्ष्मीने भी बलवान्को पसन्द किया, धर्मात्माकी तरफ़ न देखा। हमारा शिर-छत्र चला गया।'

काशीराज यह सुन-सुनकर और जले। उन्होंने ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो कोई कौशलराजको ज़िन्दा या मरा हुआ लायेगा उसे हज़ार अशर्फ़ी इनाम दी जायेंगी।

कौशलराज फटेहाल जंगल-जंगल मारे फिर रहे थे। एक दिन एक दुर्दशाग्रस्त वणिक्-पथिकने उनसे कौशल देशका रास्ता पूछा।

राजाने पूछा—'उस अभागे देशमें क्यों जा रहा है, भाई?'

वणिक्की धनहानिकी दुःखगाथा सुनकर राजा सजल-नेत्र हो गये। बोले—'चल तेरी मनोकामना-पूर्तिका मार्ग बताऊँ?'

जटाजूट राजा उसे काशीराजके दरबारमें ले गये। कहा—'काशीराज! मैं कौशलराज हूँ। मुझे पकड़कर लानेवालेके लिए आपने जो इनाम घोषित किया है वह मेरे इस साथीको प्रदान कराइए।'

सारी सभामें सन्नाटा छा गया। काशीराज भी स्तम्भित रह गये! कुछ क्षण बाद शान्त स्वरोंमें बोले—'कौशलराज, तुम धन्य हो! मैं तुम्हें तुम्हारा सारा राज्य देता हूँ और अपना हृदय भी। अब इसी सिंहासनपर बैठकर राज्य-भण्डारमेंसे इस वणिक्को जितना चाहो धन दे दो।'

यह कहकर उन्होंने उन्हें सिंहासनपर बिठाकर राजमुकुट पहनाया।

सारी सभा हर्षित हो जय-जयकार करने लगी।

—टैगोरकी एक कहानीके आधारपर

वैराग्य

श्री शुकदेवजी जन्मते ही वनको चलने लगे। यह देखकर उनके पिता श्री व्यासजी बोले—'बेटा! कुछ दिन ठहरो। मैं तुम्हारे कुछ संस्कार तो कर दूँ।'

इसपर शुकदेवजीने कहा—'अब तक जन्म-जन्मान्तरोंमें मेरे असंख्य संस्कार हो चुके हैं। उन्होंने ही मुझे भव-वनमें भटका रक्खा है। इसलिए अब मैं उनसे कोई सरोकार नहीं रखना चाहता।'

व्यासदेव—'तुम्हें ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रममें प्रवेश करना चाहिए। तभी मोक्ष प्राप्त हो सकेगा।'

शुकदेव—'अगर ब्रह्मचर्यसे मोक्ष होता हो तब तो नपुंसकोंको वह सदा ही प्राप्त रहता होगा। अगर गृहस्थ आश्रमसे मोक्ष मिलता हो तब तो सारी दुनिया ही मुक्त हो गई होती। अगर वानप्रस्थोंको मोक्ष होती हो तो सभी पशु-पक्षी मुक्त हो जायँ। अगर संन्याससे मोक्ष मिला करता हो तो सब दरिद्रोंको वह फ़ौरन् मिल जाना चाहिए।'

व्यासदेव—'सद्गृहस्थोंके लिए लोक-परलोक दोनों सुखद होते हैं। गृहस्थका संग्रह हमेशा सुखदायक होता है।'

शुकदेव—'यह तो हो सकता है कि सूरजसे बर्फ़ गिरने लगे, चन्द्रमासे ताप निकलने लग जाय; लेकिन परिग्रहसे कोई सुखी हो जाय यह तो त्रिकालमें भी संभव नहीं है।'

व्यासदेव—'बालक जब धूलमें लिपटा, तेज़ चलता और तोतली वाणी बोलता है तब वह सबको अपार आनन्द देता है।'

शुकदेव—'धूलमें लोटते हुए अपवित्र शिशुसे सुख या संतोषकी प्राप्ति सर्वथा अज्ञानमूलक है। उसमें सुख माननेवाले अज्ञानी हैं।'

व्यासदेव—'पुत्रहीन आदमी नरक जाता है।'

शुकदेव—'अगर पुत्रसे ही स्वर्ग मिल जाया करता तो सूअरों, कुत्तों और टिड्डियोंको तो वह ख़ास तौरसे मिलता।'

व्यासदेव—'पुत्रके दर्शनसे मनुष्य पितृ-ऋणसे मुक्त हो जाता है। पौत्र-दर्शनसे देव-ऋणसे मुक्त हो जाता है और प्रपौत्रके दर्शनसे उसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है।'

शुकदेव—'गोधोंकी बड़ी लम्बी उम्र होती है। वे अपनी कई पीढ़ियाँ देखते हैं। पौत्र, प्रपौत्र तो मामूली चीज़ें हैं उनके लिए। पर पता नहीं उनमेसे अब तक कितनोंको मोक्ष मिला।'

यह कहते हुए शुकदेवजी वनमें चले गये।

आश्चर्य

यक्ष—'सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है ?'

युधिष्ठिर—'यही कि रोज़ बेशुमार लोग मरते चले जा रहे हैं, फिर भी जीनेवालोंको यह नहीं लगता कि एक रोज़ हमें भी मरना होगा।'

कल

धर्मराज युधिष्ठिरके पास कोई भिखारी आया। वे उस समय काममें लगे हुए थे; नम्रतापूर्वक बोले—'भगवन्, आप कल आइए, आपको इच्छित वस्तु दे दी जायेगी।'

भिखारी चला गया। लेकिन भीम उठकर दुन्दुभि बजाने लगे। सेवकोंको भी मंगलवाद्य बजानेकी आज्ञा दे दी। धर्मराजने पूछा—'आज इस वक़्त खुशीके बाजे क्यों बज रहे हैं ?'

भीम—'इसलिए कि महाराजने कालको जीत लिया !'

युधिष्ठिर (चकित होकर)—'मैंने कालको जीत लिया ?'

भीम—'महाराज ! आपने भिखारीको अभीष्ट दान कल देनेको कहा है, इसलिए कम-से-कम कल तकके लिए तो आपने कालको जीत ही लिया है।'

युधिष्ठिरको अपनी ग़लतीका भान हो गया।

गुण-दर्शन

एक साधु किसी आदमीके साथ कहीं जा रहे थे। रास्तेमें एक मरा हुआ कुत्ता मिला जो बिलकुल सड़ गया था। आदमी बोला—'महाराज ! बचकर चलिए; देखिए इस ग़लीज़ कुत्तेसे कैसी बदबू मार रही है !'

साधु बोले—'अहा ! इस कुत्तेके दाँत कैसे साफ़ और चमकीले हैं !'

अधिकार

एक आलीशान दुकानके सामने अनाजकी ढेरी लगी थी । एक बकरा आया । उसने ढेरीपर मुँह मारा । दूकानके तरुण मालिकने लाठी उठाकर बकरेके सिरपर ज़ोरसे मारी । बकरा मिमियाता हुआ भाग गया ।

यह घटना देखकर एक संतको हँसी आ गई । किसीने उनके हँसनेका कारण पूछा, तो बोले—'पिछले जन्ममें इस दूकानका मालिक यह बकरा ही था । ज़िन्दगी-भर सख्त मेहनत करके उसने इस दूकानकी तरक़्क़ी की थी । यह नौजवान उसीका बेटा है । मुझे हँसी इस बातपर आई कि देखो जो एक दिन इस सारी सम्पत्तिका मालिक था उसे आज एक मुट्ठीभर अनाजका भी अधिकार नहीं है ! और जिस पुत्रको बड़े प्यारसे पाला-पोसा वही लाठीसे मार रहा है !!'

अन्नका असर

महाभारतका युद्ध समाप्त हो गया था । शर-शय्यापर पड़े हुए भीष्म पितामह उपदेश दे रहे थे । बीचमें महारानी द्रौपदीको हँसी आ गई ।

'बेटी ! तू हँसी क्यों ?' पितामहने पूछा ।

'मुझसे भूल हो गई । पितामह मुझे क्षमा करें,' द्रौपदीने संकुचित होकर कहा ।

'तेरी हँसी अकारण नहीं हो सकती । निःसंकोच बता क्यों हँसी ।'

'बड़ी अभद्रताकी बात है । फिर भी आप इजाज़त दे रहे है तो बताती हूँ । आप उपदेश दे रहे थे उस वक़्त मुझे यह विचार आया कि 'आज तो आप धर्मकी ऐसी उत्तम व्याख्या कर रहे हैं, लेकिन कौरवोंकी सभामें जब दुःशासन मुझे नंगी करने लगा था उस वक़्त आपका यह धर्मज्ञान कहाँ चला गया था । मनमें इस बातके आते ही मुझे हँसी आ गई । आप मुझे क्षमा करें ।'

भीष्म बोले—'इसमें क्षमा करनेकी कोई बात नहीं है। मुझे धर्मज्ञान तो उस वक़्त भी था, लेकिन दुर्योधनका अन्यायपूर्ण अन्न खानेसे मेरी बुद्धि मलिन हो गई थी। पर अब अर्जुनके बाणोंसे मेरे शरीरसे उस दूषित अन्नसे बना सारा रक्त निकल गया है। इसलिए अब बुद्धिके शुद्ध होनेपर धर्मका विवेचन कर रहा हूँ।'

चमार

राजा जनकके यहाँ विद्वानोंकी एक सभा हो रही थी। जब वहाँ अष्टावक्र आये तो उनके टेढ़े-मेढ़े शरीरकी बेढंगी आकृतिको देखकर सभाके लगभग सब लोग हँसने लगे। अष्टावक्रकी विचक्षण बुद्धिसे उनके हँसनेका कारण छिपा न रहा। बुरा न मानकर वे खुद भी ज़ोरसे हँसने लगे।

'महाराज, आप हँस क्यों रहे हैं ?'

'तुम लोग क्यों हँस रहे हो ?'

'हम तो आपकी इस अटपटी आकृतिपर हँस रहे हैं।'

'और मैं इसलिए हँस रहा हूँ कि बुलाया गया था विद्वानोंकी सभामें और आ पहुँचा हूँ चमारोंकी सभामें।'

'आप विद्वानोंको चमार कहते हैं !'

'जो हड्डी-चमड़ेको ही देखे वह चमार ही तो होता है,' अष्टावक्र बोले।

कमी

श्रीशुकदेवजी अपने पिता वेदव्यासजीकी आज्ञासे आत्मज्ञान प्राप्त करनेके लिए राजा जनकके यहाँ आये। उनकी मनोहर मिथिला नगरीमेंसे गुज़रते हुए उसकी किसी चीज़को देखकर वे आकृष्ट नहीं हुए। महलके

दरवाजेपर पहुँचे तो द्वारपालोंने उन्हें वहीं रोक दिया। तीन दिन तक बाहर खड़े हुए धूप-शीत सहन करते रहे, किसीने बैठने तक को न कहा। चौथे दिन उन्हें छायामें बिठा दिया गया। वे पूर्ववत् यहाँ भी आत्मचिन्तन करते रहे।

बादमें उन्हें अत्यन्त सम्मानपूर्वक प्रमदावनमें पहुँचा दिया गया। वहाँ परम सुन्दरी युवतियोंने उन्हें दिव्य भोजन कराया और उनके सामने हँसती-खेलती-नाचती-गाती रहीं। रातको सोनेके लिए आलीशान पलंग बिछा दिया गया। वे ध्यान करते-करते कुछ देरके लिए सो गये, फिर उठकर ध्यानमग्न हो गये। युवतियाँ उनके ध्यानके समय भी तरह-तरहकी विनोद लीलाएँ करती रहीं मगर वे लवलेश विचलित नहीं हुए।

अगले दिन महाराज जनकने उनकी बड़ी आव-भगत की। बातचीत हुई।

अन्तमें राजा जनक बोले—'आप दुःख-सुख, मान-अपमान, राग-रंग आदिसे पूर्ण विरक्त परमज्ञानी महात्मा हैं। बस इतनी ही कमी है कि आप अपनेमें कमी मानते हैं।'

इस बोधसे उन्हें पूर्ण आत्म-साक्षात्कार हो गया।

मध्यम मार्ग

सत्यकी खोजमें गौतम भरी जवानीमें राज्य-वैभव, रूपराशि यशोधरा और चाँदकेसे टुकड़े राहुलको छोड़कर घरसे निकल पड़े। वे रोग, बुढ़ापा और मौतपर विजय पाना चाहते थे। उन्हें दुःखका कारण जानकर शाश्वत आनन्द पाना था। एक वृक्षके नीचे बैठकर तपस्या करने लगे।

एक रोज़ नज़दीकसे ही कुछ गानेवालियाँ गाती हुई निकली जा रही थीं। उनके गानेका भाव था—'अपने सितारके तारोंको ढीला मत छोड़, और न इतना खींच कि वे टूट जायँ!'

गौतमके कानोंमें यह आवाज़ पड़ी कि उन्हें प्रकाश मिल गया। उन्होंने जान लिया कि ठीक तरह जीनेके लिए घोर तप और अति भोग-को छोड़कर मध्यम मार्ग अपनाना चाहिए।

समझौता

रोहिणी नदीके पानीके उपयोगपर शाक्यों और कोलियोंमें भयङ्कर झगड़ा हो गया। मारकाट और रक्तपातकी नौबत आ गई।

बिहार करते हुए महात्मा बुद्ध उधर आ निकले।

'किस बातका कलह है, महाराजो ?'

'रोहिणीके पानीका झगड़ा है, भन्ते।'

'पानीका क्या मूल्य है, महाराजो ?'

'कुछ भी नहीं है, भन्ते।'

'क्षत्रियोंके खूनका क्या मूल्य है, महाराजो ?'

शर्मसे लोगोंकी आँखें नीची हो गईं। दोनों पक्षोंने समझौता कर लिया।

सुख

विशाखाके केश और वस्त्र भीगे हुए थे। बड़ी रंजीदा और दुखी नज़र आती थी।

'तुम्हारी इस असाधारण स्थितिसे आश्चर्य होता है!' महात्मा बुद्धने उससे कहा।

'मेरे पौत्रका देहान्त हो गया है, भन्ते। मृतके प्रति यह शोकाचरण है', विशाखा बोली।

'विशाखे ! श्रावस्तीमें इस समय जितने मनुष्य हैं, तुम उतने पुत्र-पौत्र-की इच्छा करती हो ?'

'हाँ भन्ते !'

'श्रावस्तीमें रोज़ कितने आदमी मरते होंगे ?'

'कम-से-कम एक तो हर रोज़ मरता ही है।'

'तो क्या किसी दिन तुम बिना भीगे केश और वस्त्रके रह सकोगी ?'

'नहीं, भन्ते !'

'जिसके सौ प्रिय (सगे-सम्बन्धी) हैं, उसे सौ दुःख होते हैं। जिसका एक प्रिय है उसे केवल एक दुःख होता है। जिसका एक भी अपना नहीं है उसके लिए जगत्में कहीं भी दुःख नहीं है। वह सुखरूप हो जाता है। जगत्में सुखी होनेका एकमात्र उपाय यह है कि किसीको भी अपना प्रिय न माने, किसीसे ममता न रखे। अशोक और प्रसन्न होना चाहे तो कहीं भी सम्बन्ध स्वीकार न करे।'

गाली

एक ब्राह्मण गौतम बुद्धसे दीक्षा लेकर भिक्षु हो गया। उसका एक सम्बन्धी इससे बड़ा बिगड़ा और आकर तथागतको गालियाँ देने लगा। जब थक कर चुप हो गया तो तथागतने पूछा—'क्यों भाई ! तुम्हारे घर कभी अतिथि आते हैं ?'

'आते हैं।'

'तुम उनका सत्कार करते हो ?'

'अतिथिका सत्कार कौन मूर्ख नहीं करेगा ?'

'मान लो तुम्हारी दी हुई चीज़ें अतिथि स्वीकार न करे तो वे कहाँ जायेंगी ?'

'वे जायँगी कहाँ, अतिथि नहीं लेगा तो मेरे ही पास रहेंगी।'

'तो भद्र ! तुम्हारी दी हुई गालियाँ मैं स्वीकार नही करता।'

ब्राह्मणका मस्तक लज्जासे झुक गया।

निज-बल

एक बार श्रमण महावीर वनमें ध्यानस्थ खड़े थे। एक ग्वाला आकर बोला—'ज़रा देखते रहना मेरे बैल यहाँ चर रहे हैं, मैं अभी आया।'

तपस्वी महावीर अपनी समाधिमें लीन रहे। ग्वाला लौट कर आया तो देखता है कि बैल वहाँ नहीं हैं। वे चरते-चरते कहीं दूर निकल गये थे।

'मेरे बैल कहाँ हैं ?'

महावीर पूर्ववत् ध्यानावस्थित हैं।

ग्वाला गुस्सेमें भर कर उन्हें मारनेके लिए उद्यत हो गया। उधर इन्द्र स्वर्गसे आते हैं कि कहीं यह अज्ञानी श्रमण महावीरको सताने न लगे।

इन्द्रके फटकारनेपर ग्वाला चला गया। फिर इन्द्रने श्रमण महावीरसे कहा—'भंते ! आपके साधना-कालमें ऐसे संकटोंसे आपकी रक्षा करनेके लिए आपकी पवित्र सेवामें आपके समीप रहना चाहता हूँ।'

महावीर बोले—'देवेन्द्र ! कोई तीर्थंकर किसी इन्द्रकी सहायतासे मोक्ष पाने नहीं निकलता। यह असंभव है कि मुक्ति किसी दूसरेकी सहायतासे प्राप्त की जा सके। कैवल्य केवल निज पुरुषार्थसे मिलता है।'

सर्वव्यापक

गुरु नानक यात्रा करते हुए मक्का पहुँच गये थे। रातको वे काबेकी तरफ़ पैर करके सो गये। सुबह जब मौलवियोंने उन्हें इस तरह सोते देखा तो गुस्सेसे लाल होकर डाँटा—'तू कौन है ? ख़ुदाके घरकी ओर पैर पसारे पड़ा है ! तुझे शर्म नहीं आती ?'

गुरुने धीमेसे कहा—'तो जिधर ख़ुदा न हो उधर कर दो मेरे पैर।'

सावधान

नारायण बचपनसे ही विरक्त-सा रहता। ज्ञान, ध्यान, तपमें उसका समय बीतता। माँ पुत्र-वधूका मुँह देखनेके लिए उतावली थी। वह योग भी आगया।

बारह वर्षका किशोर नारायण बरातियों सहित धूमधाम और गाजे-बाजेके साथ विवाह-मंडपमें पहुँचा।

मंगलाष्टक शुरू हुए। ब्राह्मणोंने कहा—'शुभ मङ्गल, सावधान!'

नारायणने मन-ही-मन इसका अर्थ लगाया—संसारकी दुखदायिनी बेड़ी तुम्हारे पैरोंमें पड़ने जा रही है, इसलिए सावधान!

नारायण तत्काल उठकर भाग निकला। वही नारायण वर्षोंकी कठोर तपस्याके बलसे 'रामदास' और फिर 'समर्थ' बन गया।

अहंकार

सामनगढ़का किला बन रहा था। श्री शिवाजी महाराज उसका निरीक्षण करने आये। वहाँ बहुत-से मज़दूरोंको काम करते देखकर उन्हें यह अहंकार भाव हुआ कि 'मेरी बदौलत इतने लोगोंकी रोज़ी चलती है।' सद्‌गुरु समर्थ इस बातको जान गये। वे वहाँ आ पहुँचे।

'वाह, वाह, शिववा! इस स्थानका भाग्योदय और इतने जीवोंका पालन तुम्हारे ही कारण हो रहा है।'

सद्‌गुरुके श्रीमुखसे यह सुनकर श्री शिवाजी महाराजको धन्यता प्रतीत हुई। बोले—'यह सब आपके ही आशीर्वादका फल है।'

बने हुए मार्गमें एक बड़ी शिला पड़ी देख कर सद्‌गुरुने पूछा—'यह शिला यहाँ बीचमें क्यों पड़ी है?'

उत्तर मिला—'रास्ता बन जानेपर इसे तुड़वा डाला जायेगा।'

श्री समर्थ बोले—'नहीं, नहीं, कामको हाथों-हाथ कर डालना चाहिए; वरना जो काम पीछे रह जाता है, वह हो नहीं पाता।'

फ़ौरन् कारीगरोंको बुलाया गया। शिला टूटी तो सबने देखा कि शिलाके अन्दर पानीसे भरा एक गड्ढा निकला जिसमें एक जीवित मेंढक बैठा हुआ था। उसे देखकर सद्गुरु बोले—'वाह,वाह, शिववा, धन्य हो तुम ! इस शिलाके अन्दर भी तुमने पानी रखवा कर इस मेंढकके जीनेका इन्तज़ाम कर रक्खा है !'

सुनकर शिवाजी महाराजके दिलमें एक बिजली-सी कौंध गई। उन्हें अपने अहंकारका पता लग गया। उन्होंने गुरुजीके चरणोंमें गिर कर अपराधकी क्षमा माँगी।

क्षमा

पैठण नगरमें एक पठान गोदावरी-स्नान करके आनेवालोंको तंग किया करता था।

श्री एकनाथ महाराजको भी वह बहुत कष्ट देता था। और लोग तो कुछ बुरा-भला कहते भी थे, मगर एकनाथ जी कुछ कहते ही नहीं थे कभी।

एक दिन जब एकनाथजी. स्नान करके आ रहे थे तो पठानने उनके ऊपर कुल्ला कर दिया। वे शान्त भावसे फिर स्नान करने लौट पड़े। जब स्नान करके उधरसे गुज़रे तो पठानने उनपर फिर कुल्ला कर दिया। वे उसी तरह फिर नहाने चल दिये। मगर पठान अपनी दुष्टतासे बाज़ न आया—उसने उनपर इस तरह एक सौ आठ बार कुल्ला किया और हर बार एकनाथ जीको स्नान करना पड़ा।

अन्तमें सन्तकी क्षमाकी विजय हुई। पठानको अपने कामपर शर्म आई। वह एकनाथजीके पैरोंपर गिर पड़ा—'आप खुदाके सच्चे बन्दे हैं। मुझे माफ़ कर दें। आइन्दा मैं कभी किसीको तकलीफ़ नहीं दूँगा।'

सन्त बोले—'इसमें माफ़ी माँगनेकी क्या बात है। आपकी कृपासे आज मुझे एक सौ आठ बार गोदावरीके स्नानका पुण्य प्राप्त हुआ।'

संकीर्ण दृष्टि

एक राजकुमारका धनुष खो गया। सैनिकोंने कहा—'हुज़ूर, हुक्म फ़र्माइए। हमलोग ढूँढ़कर लायें ?' राजकुमारने कहा—'नहीं भाई, क्या ज़रूरत है! वह इसी देशके किसी शख़्सके पास होगा। देशकी चीज़ आखिर देशके ही किसी आदमीके पास है न!'

इस बातको जब महात्मा कन्फ़्यूशसने सुना तो कहा—'राजकुमारकी दृष्टि संकीर्ण है, नहीं तो वे कहते—चलो, क्या हुआ, एक आदमीकी चीज़ किसी आदमीके ही पास है न!'

—चीनी काव्य-संग्रह

गर्व-खर्व

जब परमेश्वरने देखा कि इन्द्रधनुषको अपने रंगका गर्व हो गया है तो उसने एक मोर-पंख उसकी ओर उड़ाया। उसे देखकर इन्द्रधनुषने जो सर नीचा किया सो आजतक नीचा है!

—मराठी मासिक 'वसन्त'

संगीन जुर्म

न्यूयार्कके एक मशहूर मेयर ला गाडियाको—जो अपनी सहृदयता और सुप्रबन्धके लिए बहुत प्रसिद्ध हैं—पुलिस अदालतके मुक़दमोंसे बड़ी दिलचस्पी थी; क्योंकि वहाँ उन्हें नगरकी वास्तविक स्थितिका पता मिलता था। इसीलिए वे अकसर पुलिसके मुक़दमोंकी अध्यक्षता किया करते थे। एक दिन पुलिसने एक चोरपर मुक़दमा चलाया कि उसने एक रोटी चुराई है। मुलज़िमने अपने बचावमें सिर्फ़ एक ही जुमला कहा—'मेरा परिवार भूखा था, इसलिए मैं चोरी करनेपर मजबूर था।' मेयरने फ़ैसला दिया—'चूँकि मुलज़िमने चोरी की है, इसलिए मैं उसपर दस डालर जुर्माना करता हूँ।' और फ़ौरन् अपनी जेबसे दस डालर निकालकर मुलज़िमको दे दिये—'यह रहा तुम्हारा जुरमाना।' फिर उन्होंने उत्तप्त भावसे हाज़िरीनसे कहा—'लेकिन साथ ही अदालतमें हाज़िर हर शख्सपर मैं आधा डालर जुर्माना करता हूँ; क्योंकि वह एक ऐसे समाजमें रहनेका संगीन जुर्म करता है जिसमें एक बेकस इन्सानको रोटी चोरी करनी पड़ती है।'

—'हाफ़मैन'के संस्मरणोंसे

मतिमन्द

एक कर्मकाण्डी ब्राह्मण किसी सेठके यहाँ गीतापाठके लिए जा रहा था। रास्तेमें एक नदी पड़ती थी, उसके किनारे एक घड़ियाल बैठा मिला। बोला—'महाराज, पहले मुझे गीता सुनाइए, फिर सेठजीको।' यह कहते हुए उसने भेंट स्वरूप मोतियोंका एक हार ब्राह्मण देवताके सामने रख दिया। फिर क्या था! ब्राह्मण गीता सुनाने लगा। यह क्रम रोज़ चलने लगा।

जब गीतापाठ सम्पूर्ण हुआ, तो घड़ियालने ब्राह्मणको मोतियोंका एक घड़ा दक्षिणामें दिया—'पण्डितजी, अगर आप मुझे त्रिवेणीमें छोड़ आवें तो ऐसे पाँच घड़े आपको और दूँगा।' ब्राह्मणने घड़ियालकी बात मान ली और उसे त्रिवेणी पहुँचा दिया। घड़ियालने वायदेके मुताबिक़ मोतियोंके पाँच घड़े दिये। लेकिन जब ब्राह्मण ख़ुशी-ख़ुशी वापस चलने लगा तो उसने देखा कि घड़ियाल उसकी तरफ़ व्यंगसे मुसकरा रहा है। पूछनेपर घड़ियालने बताया—'आप अवन्तिकामें जाकर मनोहर धोबीके गधेसे मिलिए। वह आपको इसका मतलब बतलायेगा।'

अवन्तिका पहुँचकर ब्राह्मण गधेसे मिला। गधेने कहा—पूर्व जन्ममें मैं राजाका सेवक था। राजा एकबार त्रिवेणी-स्नानको गये। त्रिवेणीके दर्शनसे वे इतने आनन्दित हुए कि उन्होंने राजपाट छोड़कर वहीं ईश्वर-भजनमे बाक़ी ज़िन्दगी बितानेका संकल्प कर लिया। मुझपर महाराजका बड़ा स्नेह था। इसलिए अनुग्रहके साथ बोले—'इच्छा हो तो यहीं हमारे साथ रहो, तुम्हारी भी उम्र सौके क़रीब पहुँच रही है, वर्ना ये हज़ार मुद्राएँ लेकर घर लौट जाओ।' मैं मूढ़ था। धन-वैभवके व्यामोहमें लौट आया। तुमने भी यही ग़लती की। बुढ़ापेमें घड़ियाल जैसे क्षुद्र जीवने भी आत्मशान्तिके लिए अपना इन्तज़ाम कर लिया। लेकिन तुम मनुष्य और फिर मनुष्योंमें श्रेष्ठ ब्राह्मण होकर भी धनकी तृष्णामें अभीतक दर-दर भटक रहे हो! तुम्हारी यह मतिमन्दता देखकर ही घड़ियाल हँसा था!'

—स्वामी प्रणवानन्द

स्वघात

एक बार एक राजाने राजशिल्पीको बुलाकर हुक्म दिया कि 'एक ऐसा भवन बनाओ जो ख़ूबसूरती और सुहूलियतके लिहाज़से राज भरमें

६

बेनज़ीर हो ।' भवन-निर्माणमें अन्दाज़न् ख़र्च हो सकनेवाली धनराशि भी शिल्पीको दे दी गई। इतनी दौलत अपने क़ब्ज़ेमें देखकर शिल्पीकी नीयत बिगड़ गई। उसने सोचा क्यों न घटिया और नक़ली सामग्रीसे ही भवन बना दूँ।

भवन तैयार हो गया। महाराज बहुत ख़ुश हुए। भवन उद्घाटनका बड़ा उत्सव मनाया गया। समारोहमें महाराजने ऐलान किया—'आज मेरी एक बड़ी पुरानी अभिलाषा पूर्ण हुई है। राजशिल्पीकी योग्यता और राज्यभक्तिको मैं पुरस्कृत करना चाहता हूँ। पुरस्कार तैयार है। मैं राज्यकी इस सबसे ख़ूबसूरत इमारतको ही राज्यशिल्पीको इनाममें देता हूँ।'

हमारे ही छल क्या हमें जीवनमें इसी तरह नहीं छला करते ?

—राजगोपालाचारी

जैण्टिलमैन !

जो आदमी समाजसे जितना ले अगर उतना ही उसे लौटा दे तो वह एक मामूली भद्र आदमी है।

जो समाजसे जितना ले उससे कहीं ज़्यादा उसे लौटा दे तो वह एक विशिष्ट भद्र आदमी है।

और जो अपनी सारी ज़िन्दगी समाजकी सेवामें अर्पित कर दे और बदलेमें समाजसे कुछ भी लेनेकी इच्छा न रक्खे वह एक ग़ैर-मामूली भद्र पुरुष है।

मगर आजका भद्र पुरुष तो समाजको सिर्फ़ लूटने-खसोटनेकी ही कोशिश करता रहता है। देनेके बारेमें भूलकर भी नहीं सोचता !

—जार्ज बर्नार्ड शा

ज़िन्दगीकी प्याली

लाओत्जे, बुद्ध और कन्फ़्यूशसकी आत्माएँ स्वर्गमें मिलीं। सवाल था—'जीवनका स्वाद कैसा है?' उसी समय एक अप्सरा हाथमें प्याला लिये आ पहुँची—'भगवन्, यह आपके लिए जीवनका प्याला लाई हूँ। चखिए इसका स्वाद।'

सबसे पहले लाओत्ज़ेने एक घूँट लिया। सहर्ष बोले—'वाह, बड़ा मीठा है!' तब बुद्धने पीकर विषण्ण भावसे कहा—'ओह! बहुत कड़वा है।' तब कन्फ़्यूशसने लिया और ख़ाली करके रख दिया—'दरहक़ीक़त यह न मीठा है न कड़वा और न बेस्वाद। जैसा पीनेवाला वैसा इसका स्वाद होता है। लेकिन एक बात तय है कि ख़ुद पिये बग़ैर ज़िन्दगीकी प्यालीका ज़ायक़ा नहीं जाना जा सकता।'

—चीनी कथा

मानव तन

एक मछुआ था। सुबहसे शाम तक नदीमें जाल डालकर मछलियाँ पकड़नेकी कोशिश करता रहा। लेकिन एक भी मछली जालमें न फँसी। ज्यों-ज्यों संध्या काल नज़दीक आता गया उसकी निराशा गहरी होती गई। भगवान्‌का नाम लेकर उसने एक बार और जाल डाला। पर मछलियाँ इस बार भी न आईं। हाँ एक वजनी पोटली उसके पाँवसे अटकी। मछुएने पोटली उठा ली। टटोला—'हाय, ये भी पत्थर हैं!' बड़ा झुँझलाया। मन मारे नावमें चढ़ा।

ठंडी ठंडी हवामें ज्यों-ज्यों नाव बढ़ती गई, उसके दिलमें नई आशाओं-का संचार होने लगा—'कल दूसरे किनारेपर जाल डालूँगा। सबसे छिपकर·······उधर कोई नहीं जाता·······वहाँ बहुतेरी मछलियाँ पकड़ी·

जा सकती हैं·······।' मन यूँ चंचल था तो हाथ कैसे निश्चल रहते ? हाथसे वह उस पोटलीके 'पत्थर' एक-एक करके नदींमें डालता जा रहा था। पोटली ख़ाली हो गई, सिर्फ़ एक 'पत्थर' बचा, जो उसके हाथमें था। इत्तिफ़ाक़से उसकी नज़र उसपर गई। देखा, फिर देखा ग़ौर से ! ज़ोरसे मुट्ठी बाँध ली—यह तो नीलम था ! मछुएने अपनी छाती पीट ली !

संसारकी आशा-निराशामें पागलकी तरह उलझे हुए आदमीको भी एक दिन यह जीवन-रत्न खोकर इसी तरह पछताना पड़ता है !

—रमण महर्षि

मायावी संसार

[गुरु वशिष्ठका एक अद्भुत रूपक]

एक शून्य नामका शहर है। उसमें तीन राजकुमार रहते थे, जिनमें दो तो अभी पैदा ही नहीं हुए थे और एक गर्भमें भी नहीं आया था। वे आफ़तमें पड़ गये। दुःखी होकर सोचने लगे। तय किया कि कहीं जाकर धन कमाना चाहिए। चलते-चलते थककर तीन पेड़ोंके नीचे आराम करने लगे। वे तीन वृक्ष ऐसे थे जिनमें दो तो उपजे ही नहीं थे और एकका बीज भी नहीं बोया गया था। उन्हींके अमृतके समान सुस्वादु फल खाये। फिर आगे बढ़े तो बहुत सुन्दर, निर्मल, शीतल जलवाली तीन नदियाँ उन्हें दिखाई पड़ीं। वे नदियाँ ऐसी थीं कि दो में तो पानी ही नहीं था, और एक सूख गई थी। तीनोंने उन नदियोंमें बड़े आनन्दसे जलक्रीड़ा की और जल पिया। फिर चलते-चलते जब शाम हो गई तो उन्हें एक भविष्य-नगर दिखाई दिया। वे उस नगरमें घुसे तो उसमें तीन मकान मिले, जिनमें दो तो अभी बने ही नहीं थे और तीसरेमें एक भी दीवार नहीं थी।

वहाँ रहकर उन्होंने तीन ब्राह्मणोंको न्यौता दिया, जिनमे दो के तो शरीर ही नहीं थे और तीसरेके मुँह ही नहीं था। उन्होंने तीन थालियोंमें भोजन किया, जिनमें दो में तो तली ही नहीं थी और तीसरी चूर्ण-रूप थी। उस भविष्य-नगरमें वे तीनों बालक आनन्दपूर्वक अपना जीवन बिताते रहे !

सभ्यता

तीन कुत्ते साथ-साथ घूमने निकले। एकने कहा—'इस 'श्वान-युग' में हमें कितना आराम है ! जल, थल, नभ किसीकी भी सैर हम बेरोक-टोक कर सकते है !'

दूसरा बोला—'हमारी ख़ूबसूरती भी बढ़ गई है। कभी पानीमें अपनी परछाई देखो तो पता चले !'

तीसरेने कहा—'सबसे ज़्यादा ताज्जुबकी बात तो यह है कि इस युगमें कितना स्थिर विचार-साम्य है।'

कि, इतनेमें ही कुत्ता पकड़नेवाला आता दिखाई पड़ा। फ़िलफ़ौर तीसरा कुत्ता गलीकी तरफ़ भागता हुआ चिल्लाया—'भागो जल्दी ! सभ्यता हमारे पीछे पड़ी है !'

—खलील जिब्रान

सबसे दुःखी प्राणी

'संसारमें सबसे दुखी प्राणी कौन है ?' बेचारी मछलियाँ ! क्योंकि उनके दुःखके आँसू पानीमें धुल जाते हैं, किसीको दिखते नहीं। इसलिए वे तमाम सहानुभूति और स्नेहसे वंचित रह जाती है। सहानुभूतिके अभावमें रज-सम दुःख भी गिरिवत् हो जाता है !'

—खलील जिब्रान

दयाभाव

एक बार हजरत अली नमाज़ पढ़ रहे थे। एकाएक एक दुष्टने आकर उनपर तलवारसे वार करना चाहा, कि मसजिदके लोगोंने यह देखकर उसे पकड़कर अलीके सामने पेश किया। उसी वक़्त एक आदमी अलीके लिए शरबतका गिलास लेकर आया। उन्होंने बँधे हुए अपराधीकी ओर करुण दृष्टिसे देखते हुए कहा—'भाई, यह शरबत इस ग़रीबको दे दो, दौड़-धूपसे बेचारा बहुत थक गया होगा!'

साधना

शिष्य—'रोज़ाना ज़िन्दगीमें आत्म-साक्षात्कारकी साधना आप कैसे करते हैं?'

गुरु—'मुझे जब भूख लगती है तब खाता हूँ, और जब थकता हूँ तब आराम करता हूँ। बस यही मेरी साधना है।'

शिष्य—'यह तो सभी करते हैं।'

गुरु—'नहीं, सभी ऐसा नहीं करते—सौमें एक भी शायद ही करता हो।'

शिष्य—'कैसे? साफ़ समझाइए।'

गुरु—'जब लोग खाने बैठते हैं, तो सिर्फ़ हाथ-मुँहसे खाते हैं। मनसे नहीं—मन कहीं और भटकता रहता है। सोते हैं तो शरीरसे सोते हैं, मनसे नहीं! शरीर और मनके बीचकी यह दरार ही तो साधनका विक्षेप है। मैं यह दरार नहीं पड़ने देता।'

सन्त ज्ञानेश्वर

ज्ञानेश्वरके संन्यासी पिताने गुरुकी आज्ञासे गृहस्थ धर्म स्वीकार कर लिया। वे संन्यासीके पुत्र थे। वे अपने भाइयों निवृत्तिनाथ और सोपान-

देव और छोटी बहिन मुक्ताबाईके साथ आलन्दीसे चल कर पैठण आये। उन्हे शास्त्रज्ञ ब्राह्मणोंसे शुद्धिपत्र लेना था।

एक दुष्टने उन्हें छेड़ा—'इस भैंसेका नाम भी ज्ञानदेव है ?'

'हाँ, है तो। भैंसे और हममे अन्तर क्या है ? नाम और रूप तो कल्पित हैं। आत्मतत्त्व एक ही है। भेदकी कल्पना ही अज्ञान है।' ज्ञानदेव बोले।

तब उस दुष्टने भैंसेकी पीठपर चाबुक मारने शुरू कर दिये।

चावुक तो पड़ रहे थे भैंसेपर, पर मारके निशान उभर कर आ रहे थे ज्ञानेश्वरकी पीठपर !

यह देख वह दुष्ट आदमी ज्ञानेश्वरके चरणोंमें गिर कर क्षमा माँगने लगा—'मैं अज्ञानी हूँ, मुझे क्षमा करें।'

'तुम भी ज्ञानदेव हो क्षमा कौन किसे करेगा ? किसीने किसीका अपराध किया हो तो क्षमाकी बात आवे। सबमें एक ही प्रभु व्यापक हैं।'

ज्ञानेश्वर महाराजकी एकात्म भावना अखंड थी।

सबमें भगवान्

महाराष्ट्रके कुछ सन्त त्रिवेणीसे काँवरोंमें गंगाजल लिये श्रीरामेश्वरकी यात्रा कर रहे थे।

रास्तेमे देखा कि एक गधा रेतीले मैदानमें पड़ा हुआ सख्त गर्मीके मारे प्यासा तड़प रहा था।

साधुओंको उसपर दया आई। पर उपाय क्या था ? आस-पास दूरतक कोई जलाशय न था जहाँसे पानी लाकर उसे पिलाते। गंगाजल तो रामेश्वरमें भगवान् शंकरके अभिषेकके लिए था।

एकाएक संत एकनाथजी अपने कलशका जल गधेको पिलाने लगे। किसीने कहा—'यह क्या ! रामेश्वरके अभिषेकके लिए लाया जल आप गधेको……… !'

एकनाथ बोले—'कहाँ है गधा ? श्री रामेश्वर ही तो यहाँ मुझसे जल माँग रहे हैं। मैं उनका ही अभिषेक कर रहा हूँ।'

अमर जीवन

एक धनी युवकने ईसामसीहसे विनती की, 'हे देव ! मुझे ईश्वरीय जीवन प्राप्त करनेका उपाय बताइए। दुनियाकी चीज़ोंसे मुझे शान्ति नहीं मिलती।'

ईसा बोले—'वत्स ! तुमने मुझे 'देव' शब्दसे सम्बोधित किया ! देव तो केवल परमात्मा ही है। मैं तो उसके कृपाराज्यका एक मामूली सेवक हूँ—तुम अमर जीवन प्राप्त करना चाहते हो तो जाओ अपनी सब चीज़ें बेच दो और अपनी सारी सम्पत्ति ग़रीबोंको बाँट दो। यह तो मुमकिन है कि ऊँट सुईके नकुएमें-से निकल जाय, पर यह ग़ैरमुमकिन है कि धनी आदमी ईश्वरके राज्यमें दाखिल हो जाय।'

फूट

एक शिकारीने चिड़ियोंको फँसानेके लिए अपना जाल बिछाया। उसके जालमें दो पक्षी फँसे; लेकिन उन्होंने फ़ौरन् सलाह कर ली और जालको लेकर उड़ने लगे। शिकारी दीवानावार उनके पीछे दौड़ने लगा।

पास ही एक ऋषि बैठे हुए यह तमाशा देख रहे थे। उन्होंने शिकारीको बुलाकर कहा—'तुम फ़िज़ूल क्यों दौड़ रहे हो ? पक्षी तो जाल लेकर आसमानमें उड़े जा रहे हैं !'

शिकारी बोला—'महाराज ! अभी इन पक्षियोंमें एका है। वे मिलकर एक तरफ़ उड़ रहे हैं इसलिए जाल लिये जा रहे हैं। लेकिन कुछ देर बाद इनमें झगड़ा हो सकता है। मैं उसी उम्मीदमें इनके पीछे दौड़ रहा हूँ।'

शिकारीका अन्दाज़ा ठीक निकला। 'किस जगह उतरा जाय' इस बातपर दोनोंमें मतभेद हो गया। दोनों अपनी मर्ज़ीकी जगहकी तरफ़ उड़ने लगे। फिर उनसे जाल न सँभला। आख़िर गिर पड़े।

(मानव-जाति भी इन दिनों 'दो तरफ़' जा रही है। काल-व्याध घात लगाये बैठा है !)

दोस्त

एक शिकारी एक तालाबके किनारे पक्षियोंको फँसानेके लिए जाल बिछाया करता था। एक बार हंसोंकी पंक्ति उस तरफ़ आई। हंसराज जालमें फँस गया। उसके वफ़ादार मन्त्रीको छोड़कर बाक़ी सब हंस उड़ गये।

हंसराज बोला—'तुम भी उड़ जाओ। फ़िज़ूल जान देनेसे क्या फ़ायदा उठाओगे ?'

मन्त्रीने जवाब दिया—'मैं यहाँसे चला भी जाऊँ तो भी अमर तो हो नहीं जाऊँगा। मैं तो यहीं रहकर प्राण देकर भी तुम्हें बचानेकी कोशिश करूँगा।'

जब शिकारी आया तो उसने देखा कि एक हंस जालके बाहर भी डटा बैठा है। शिकारीके पूछनेपर स्वतन्त्र हंसने बताया—'मैं अपने मालिकके बग़ैर नहीं जा सकता।'

शिकारी—'तू चला जा, मैं तुझे नहीं पकड़ना चाहता।'

हंस—'नहीं, तू मुझे खा ले या बेच डाल, पर मेरे राजाको छोड़ दे !'

इसपर शिकारीका दिल पिघल गया और उसने हंसराजको छोड़ दिया।

दयामयी

श्रीरामकृष्ण परमहंसके गलेमें नासूर हो गया था। एक भक्तने मशवरा दिया—'अगर आप मनको एकाग्र करके कहें, 'रोग चला जा! रोग चला जा!' तो निश्चय ही रोग चला जायेगा।'

परमहंस बोले—'जो मन सच्चिदानन्दमयी माँका स्मरण करनेके लिए मिला है। उसे मैं हाड़-माँसके पिंजड़ेमें लगाऊँ?'

फिर भी शिष्योंने आग्रह किया—'आप माँसे प्रार्थना करें कि वह आपका रोग मिटा दे।'

श्रीरामकृष्ण बोले—'माँ सर्वज्ञ हैं, समर्थ हैं और दयामयी हैं। उन्हें जो मेरे कल्याणके लिए उचित लगता है, सो कर ही रही हैं। उनकी व्यवस्थामें हाथ डालनेका छिछोरापन मुझसे नहीं होगा।'

स्वावलम्बन

बंगालके एक छोटे स्टेशनपर गाड़ी खड़ी हुई। एक उजले-पोश युवकने 'कुली! कुली!' पुकारना शुरू किया, हालाँकि सामान उसके पास कुछ ज़्यादा नहीं था। कुली तो नहीं मिला, मगर एक अधेड़ आदमी मामूली देहातियोंके-से कपड़े पहने उसके पास आ गया। युवकने उसे कुली समझ लिया। बोला—'तुम लोग बड़े सुस्त होते हो। ले चलो इसे जल्दी।'

उस आदमीने सामान उठा लिया और युवकके पीछे-पीछे चल दिया। घर पहुँचकर वह सामान रखवा कर मज़दूरी देने लगा। वह आदमी बोला—'धन्यवाद! इसकी ज़रूरत नहीं है।'

'क्यों?' युवकने ताज्जुबसे पूछा। उसी वक़्त युवकके बड़े भाई घरमेंसे निकले और उन्होंने उस आदमीको प्रणाम किया। जब युवकको

मालूम हुआ कि जिनसे वह सामान उठवाकर लाया है वे बंगालके प्रतिष्ठित विद्वान् श्रीईश्वरचन्द्र विद्यासागर हैं, तो वह उनके पैरोंपर गिर पड़ा।

विद्यासागर बोले—'मेरे देशवासी फ़िज़ूलका अभिमान छोड़कर समझें कि अपना काम अपने हाथों करना गौरवकी बात है और स्वावलम्बी बनें, यही मेरी मज़दूरी है।'

स्वामी दयानन्द

स्वामीजी शुरूमें सिर्फ एक लंगोटी रखते थे। एक दिन किसीने आकर कहा—'महाराज! आपके पास एक ही लंगोटी है। मैं एक और लँगोटी लाया हूँ।' दयानन्द बोले—'अरे, मुझे तो यह अकेली लँगोटी बोझ हो रही है, तू एक और ले आया! जा, ले जा; भाई, इसे ले जा!

★

कायमगंजमें किसीने कहा—'आपके पास पात्र नहीं है। कमण्डलु तो होना चाहिए।' हँसकर बोले—'हमारे हाथ भी तो पात्र हैं।'

★

फ़र्रुख़ाबादमें एक स्त्री अपने मरे हुए बालककी लाश लेकर पाससे गुज़री। लाश मैले-कुचैले कपड़ोंसे लपेटी हुई थी। स्वामीजीने कहा—'माई, इसपर सफ़ेद कपड़ा क्यों नहीं लपेटा?'

'मेरे पास सफ़ेद कपड़ा या उसके लिए पैसे कहाँ, महाराज!' वह रोती हुई बोली।

स्वामीजीकी आँखोंमें आँसू उमड़ आये। बोले—'हा! राजराजेश्वर भारतकी यह दुर्दशा कि आज उसके बच्चोंके लिए कफ़न तक नहीं!'

★

अनूपशहरमें किसीने स्वामीजीको विष दे दिया। उनके मुसलमान भक्त सैय्यद मुहम्मद तहसीलदारको पता चला तो जहर देनेवालेको पकड़ मँगाया। दयानन्दके दरबारमें अपराधी पेश किया गया। महाराजने कहा—'इसे छोड़ दो। मैं दुनियामें लोगोंको क़ैद कराने नहीं, छुड़ाने आया हूँ।'

जीवन-चरित

किसीने श्री गुरुदत्त विद्यार्थीसे कहा—'आप स्वामी दयानन्दजी सरस्वतीके घनिष्ठ सम्पर्कमें रहे हैं। आप उनका एक जीवन-चरित क्यों नहीं लिख डालते ?'

'उनका जीवन-चरित लिखनेकी मैं कोशिश कर रहा हूँ।'

'कब तक पूरा होगा ?'

'मैं उसे काग़ज़पर नहीं अपने स्वभावमें अङ्कित कर रहा हूँ,' श्री गुरुदत्तजी बोले।

सहनशीलता

एक बार महात्मा गाँधी चम्पारनसे बेतिया रेलके तीसरे दर्जेमें जा रहे थे। रातको किसी स्टेशनसे एक किसान उसी डिब्बेमे चढ़ा। महात्माजीको धक्के देता हुआ बोला—'उठकर बैठो ! तुम तो ऐसे पसरे पड़े हो जैसे गाड़ी तुम्हारे ही बापकी है।'

महात्माजी उठकर बैठ गये। पास ही किसान बैठ गया। कुछ देर बाद इत्मीनानसे गाने लगा—

'धनधन गाँधीजी महाराज दुखीका दुःख मिटाने वाले।'

महात्माजी उसका गीत सुनकर मुसकराते रहे।

बेतिया स्टेशनपर महात्माजीके स्वागतके लिए हज़ारों लोग आये हुए थे। गाड़ीको स्टेशनपर पहुँचते ही आसमान जयकारोंसे गूँजने लगा। अब किसानको अपनी भूलका पता लगा। वह गाँधीजीके पैरोंपर गिर पड़ा और फूट-फूटकर रोने लगा। महात्माजीने उसे उठाया और आश्वासन दिया।

रामचरित-मानस

कुछ मित्रोंने गाँधीजीको लिखा कि, 'रामचरित-मानसमें स्त्री-जातिकी निन्दा है, बालि-वध, विभीषणके देश-द्रोह, जाति-द्रोहकी प्रशंसा है। काव्य-चातुर्य भी उसमें कुछ नहीं, फिर आप उसे सर्वोत्तम ग्रन्थ क्यों मानते हैं ?'

इसके जवाबमें उन्होंने लिखा—'आप सरीखे कुछ समीक्षक और मिल जायँ तो रामायणको 'दोषोंका पिटारा' ही बना दें ! इसपर मुझे एक बात याद आती है। एक चित्रकारने अपने आलोचकोंको जवाब देनेके लिए एक बड़े सुन्दर चित्रको प्रदर्शिनीमें रक्खा और उसके नीचे लिख दिया—'इस चित्रमें जिसको जहाँ कहीं भूल या दोष दिखाई दे, वहाँ अपनी क़लमसे निशान लगा दे।' नतीजा यह हुआ कि चित्र निशानोंसे भर गया। लेकिन वह तसवीर दर-असल बड़ी ही कलापूर्ण थी। ठीक वैसी ही हालत आपने रामायणकी की है। यूँ तो वेद, क़ुरान और बाइबिलके भी आलोचकोंका अभाव नहीं है। पर जो गुणदर्शी हैं वे उनमें दोष नहीं देखते। मैं रामचरित-मानसको सर्वोत्तम इसलिए नहीं कहता कि कोई उसमें एक भी दोष नहीं निकाल सकता, बल्कि इसलिए कि उससे करोड़ों लोगोंको शान्ति मिलती है। 'मानस' का हर पृष्ठ भक्तिसे भरपूर है। वह अनुभवजन्य ज्ञानका भण्डार है।'

मैं ख़ून नहीं पी सकता !

महात्मा गाँधीजीने कहा—'मैने गुरु नहीं बनाया; लेकिन मुझे कोई गुरु मिले हैं तो वे हैं रायचन्द भाई।'

ये रायचन्द भाई (श्रीमद् राजचन्द्र) बम्बईके एक जैन जौहरी थे। उन्होंने एक व्यापारीसे सौदा किया। यह तय हो गया कि अमुक तारीख़

तक अमुक भावमें इतना जवाहरात वह व्यापारी देगा। जिसकी लिखा-पढ़ी भी हो गई।

संयोगकी बात, जवाहरातके मूल्य इतने बढ़ गये कि अगर वह व्यापारी वायदेके मुताबिक़ अदायगी करे तो उसका घर तक नीलाम हो जाय।

रायचन्द भाईको जवाहरातके बाज़ार-भावका पता चला तो वे उस व्यापारीकी दूकानपर पहुँचे। व्यापारी बोला—'मैं आपके सौदेके लिए ख़ुद चिन्तित हूँ। चाहे जो हो, घाटेके रुपये आपको ज़रूर दूँगा, आप चिन्ता न करें।'

रायचन्द भाई बोले—'मैं चिन्ता कैसे न करूँ? जब तुमको चिन्ता लग गई है तो मुझे भी चिन्ता होनी ही चाहिए। हम दोनोंकी चिन्ताका कारण यह लिखा-पढ़ी है। इसे ख़त्म कर दिया जाय तो दोनोंकी चिन्ता मिट जाय।'

व्यापारी बोला—'ऐसा नहीं। आप मुझे दो दिनका समय दें, मैं रुपये चुका दूँगा।'

रायचन्द भाईने लिखा-पढ़ीके काग़ज़को टुकड़े-टुकड़े करते हुए कहा—'इस लिखा-पढ़ीसे तुम बँध गये थे। बाज़ार-भाव बढ़नेसे मेरा चालीस-पचास हज़ार रुपया तुमपर लेना हो गया। लेकिन मैं तुम्हारी हालत जानता हूँ। ये रुपये मैं तुमसे लूँ तो तुम्हारी क्या दशा होगी? रायचन्द दूध पी सकता है, ख़ून नहीं पी सकता।'

व्यापारी कृतज्ञतासे रायचन्द भाईके पैरोंपर गिर पड़ा।

क्षमा-दान

स्वामी उग्रानन्दजी बड़े सहिष्णु और सबमें भगवान्‌को देखनेवाले थे। एकबार वे किसी गाँवके बाहर एक पेड़के नीचे ब्रह्मानन्दकी मस्तीमें पड़े

हुए थे। उसी रात उस गाँवके किसी किसानके बैलकी चोरी हो गई। लोग चोर की तलाशमें निकले। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते वे स्वामीजीके पास पहुँच गये। उन्होंने स्वामीजीको चोरोंका साथी समझकर ख़ूब मारा। उनके मुँहसे ख़ूनतक बहने लगा। मगर स्वामीजी बिलकुल शान्त रहे। लोगोंने स्वामीजीको रातभर एक कोठरीमें बन्द रक्खा। सुबह होनेपर उन्हें थानेमें ले गये। थानेदार स्वामीजीको अच्छी तरह जानता था और उनका भक्त था। स्वामीजीको आता देख वह भागा हुआ आया और उनके चरणोंमें गिरकर प्रणाम किया। यह देखकर गाँववाले बहुत घबराये। थानेदारने सिपाहियोंको हुक्म दिया—'मारो इन दुष्टोंको, स्वामीजीको कैसे पकड़कर लाये।' किसान लोग थर-थर काँपने लगे। जब सिपाही उन्हें पकड़ने बढ़े तो स्वामीजीने उन्हे रोका और थानेदारसे कहा—'देख ! जो तू मेरा प्रेमी है तो इन्हें बिलकुल कष्ट न दे और इन्हें मिठाई मँगाकर खिला।' थानेदारने बहुत-कुछ कहा, मगर स्वामीजी नहीं माने। उन्होंने थानेदारसे मिठाई मँगवाकर उन्हें खिलवाई और गाँवको सकुशल लौट जाने दिया।

घटघटवासी

उपासनी महाराज एक ब्राह्मण थे। श्मशानके पास किसी टूटे-फूटे मन्दिरमें रहते थे। साई बाबाके भक्त थे। अपने हाथसे भोजन बनाकर रोज़ मसजिदमें बाबाके लिए ले जाते थे। साई बाबाके भोजन करनेके बाद ही अन्न-जल ग्रहण करते थे।

एक दिन साई बाबाने उनसे पूछा—'तुम्हारे पास और लोग भी आते हैं उस मन्दिरमें ?'

'वहाँ कोई नहीं आता, बाबा।'

'अच्छा कभी-कभी मैं आता रहूँगा।'

सख्त धूप पड़ रही थी। महाराज भोजनकी थाली लेकर बाबाके पास जा रहे थे। रास्तेमें उन्होंने भूखसे व्याकुल एक कुत्ता देखा। महा-राजने सोचा गुरुको भोजन करानेके बाद ही इसे खिलाना उचित है। वे आगे बढ़ रहे थे कि एकाएक विचार बदला। लेकिन कुत्ता ग़ायब हो गया था।

'तुम्हें इतनी कड़ी धूपमें आनेकी क्या ज़रूरत थी, मैं तो रास्तेमे ही खड़ा था।' साईं बाबाके इस कथनसे महाराजको कुत्तेकी याद आ गई; वे पश्चात्ताप करने लगे।

× × ×

दूसरे दिन भोजनकी थाली लेकर महाराज ज्यों ही मन्दिरसे बाहर निकले कि दीवारके सहारे खड़ा हुआ एक शूद्र दिखा। वह गिड़गिड़ाने लगा, लेकिन महाराजको गुरुके पास पहले पहुँचना था।

'तुमने आज फिर फ़िज़ूल तकलीफ़ की। मैं तो मन्दिरके पास ही खड़ा था।' साईं बाबाने अपने प्रिय शिष्यकी आँखें खोल दीं।

'कुत्ते और शूद्र—सबमें परमात्माका वास है। सबके प्रति सद्भाव रखकर यथोचित कर्तव्यका पालन परम श्रेयस्कर है। भगवान् घट-घटमें परिव्याप्त हैं। उन्हें पहिचानो, जानो, मानो।' साईं बाबाने आशीर्वाद दिया।

नर्तकी

सौन्दर्यकी मूर्ति वासवदत्ता मथुराकी सर्वश्रेष्ठ नर्तकी थी। एक रोज उसने खिड़कीसे बाहर देखा कि एक अत्यन्त सुन्दर युवा भिक्षु पीत चीवर ओढ़े, भिक्षापात्र लिये रास्तेसे जा रहा है। नर्तकी उसपर मोहित हो गई; जल्दीसे ज़ीनेसे उतरकर दरवाज़ेपर आई।

'भन्ते!' नर्तकीने भिक्षुको पुकारा।

'भद्रे !' भिक्षु आकर मस्तक झुकाये उसके सामने खड़ा हो गया और अपना भिक्षापात्र आगे बढ़ा दिया ।

'आप ऊपर पधारें ! यह मेरा भवन, मेरी सब सम्पत्ति और ख़ुद मैं अब आपकी हूँ । मुझे आप स्वीकार करें ।'

'मैं तुम्हारे पास फिर आऊँगा ।'

'कब ?'

'वक़्त आनेपर !' कहते हुए भिक्षु आगे बढ़ गया ।

× × ×

शहरसे बाहर रास्तेपर एक स्त्री ज़मीनपर पड़ी थी । कपड़े मैले-कुचैले और फटे हुए, सारे शरीरमें घाव जिनसे बदबू उड़ रही थी । यह औरत थी वासवदत्ता ! अपने दुराचारसे इस भयंकर रोगका शिकार हो गई थी । सम्पत्ति नष्ट हो गई थी । अब वह निराश्रित मार्गपर पड़ी थी ।

एकाएक एक भिक्षु उधरसे निकला और उसके पास आकर बोला—'वासवदत्ता ! मैं आ गया हूँ ।'

'कौन ?' उस नारीने बड़े कष्टसे उसकी तरफ़ देखनेकी कोशिश की ।

'भिक्षु उपगुप्त ।' भिक्षुने वहीं बैठकर उसके घाव धोने शुरू कर दिये ।

'तुम अब आये ? अब मेरे पास क्या धरा है । मेरा यौवन, सौन्दर्य, धन आदि सभी कुछ तो नष्ट हो गया ।' नर्तकीकी आँखोंसे आँसू बह निकले ।

'मेरे आनेका समय तो अभी हुआ है ।' भिक्षुने उसे धमका शान्तिदायी उपदेश देना शुरू किया । ये भिक्षु ही देवप्रिय सम्राट् अशोकके गुरु हुए ।

बाहुबलि

सम्राट् भरतकी दिग्विजयमें सिर्फ़ इतनी कमी रह गई थी कि उनके छोटे भाई पोदनपुर-नरेश बाहुबलिने उनकी अधीनता स्वीकार नहीं की

७

थी। बाहुबलिके पास सन्देश भेजा गया तो उन्होंने उत्तर दिया—'महासम्राट् पिता श्री ऋषभदेव महाराजने मुझे यह राज्य दिया था। मैं अपने बड़े भाईका सम्मान करता हूँ, पर वे इस राज्यपर कुदृष्टि न डालें।'

भरतको तो चक्रवर्ती बनना था। वे अपनी दिग्विजयको अपूर्ण नहीं रहने देना चाहते थे। रणभेरी बजने लगी। चतुर मंत्रियोंने सम्मति दी—'यह तो भाई-भाईकी लड़ाई है सम्राट्! फ़िज़ूलके नर-संहारसे क्या फ़ायदा? आप दोनों ही दृष्टि-युद्ध, जल-युद्ध और मल्लयुद्ध करके हार-जीतका फ़ैसला कर लें।'

दोनोंने यह बात मान ली। दृष्टि-युद्ध और जल-युद्धमें बाहुबलि जीत गये। फिर दोनों भाई अखाड़ेमें उतरे। जब इसमें भी जीतनेके भरतको लक्षण न दिखे तो उन्होंने अपने पितासे प्राप्त अमोघ अस्त्र 'चक्ररत्न' का अपने छोटे भाईपर प्रयोग कर दिया। लेकिन 'चक्ररत्न' कुटुम्बियोंपर नहीं चला करता, इसलिए वह बाहुबलिके पास पहुँचकर लौट आया।

बाहुबलिने अपनी प्रचण्ड भुजाओंसे भरतको अपने सरसे भी ऊपर उठा लिया और ज़मीनपर पटकने ही वाले थे कि एकाएक ज्ञानका उदय हुआ। वैराग्य हो गया। बाहुबलिने धीरेसे भरतको सामने खड़ा कर दिया और बोले—'भाई, क्षमा करना। इस राज्य-वैभवके मदसे अन्धा होकर मैं बड़े भाईका अपमान कर बैठा।' यह कहते हुए बाहुबलि मल्लशालासे निकलकर सीधे वनको चल दिये और घोर तपमें लीन हो गये।

लीला

एक बार यूनानके बादशाह बीमार पड़े। कोई इलाज माफ़िक़ नहीं आ रहा था। अन्तमें हकीमोंने कहा कि अमुक लक्षणों वाले आदमीका कलेजा मिले तो कुछ उम्मीद हो सकती है।

राजसेवक चौतरफ़ दौड़ाये गये—आखिर एक लड़केको ले ही आये। उसके ग़रीब माँ-बापने काफ़ी धन लेकर अपने लख्ते-जिगरको वधके लिए दे दिया था।

काज़ीने फ़तवा दे दिया कि 'बादशाहकी जान बचानेके लिए किसीकी जान लेना गुनाह नहीं है।'

लड़का बादशाहके सामने खड़ा था। हकीम अपनी तैयारी करके बैठ गये। जल्लादने तलवार उठाई। उस वक़्त लड़का आसमानकी तरफ़ देखकर हँस पड़ा। बादशाहने इशारेसे जल्लादको रोककर लड़केसे पूछा—'लड़के! तू हँसा क्यों?'

लड़का बोला—'माँ-बाप जो कि सन्तानकी रक्षाके लिए प्राण देते हैं, उन्होंने मारे जानेके लिए बेच दिया; काज़ी जो न्यायमूर्ति कहलाता है, उसने एक बेक़सूरकी हत्याका फ़तवा दे दिया। बादशाह जो प्रजाका रक्षक है अपनी निर्दोष प्रजाके एक बालकको हत्या करवा रहा है। नितान्त असहाय अवस्थाको पहुँचकर मैं दीन-दुनियाके मालिककी ओर देखकर हँसा कि 'प्रभो! ससारकी लीला तो देख ली, अब तेरी लीला देखनी है। जल्लादकी उठी तलवारका तू क्या करेगा!'

'मुझे माफ़ कर बेटा! यह तलवार अब फिर नहीं उठेगी।' बादशाहने क्षमा माँगी।

प्रेम

एथेन्समें दार्शनिक विद्वानोंकी एक 'महफ़िल' जमी। चर्चाका विषय रक्खा गया 'प्रेम'।

फ़ेडरसने कहा—'देवोंका देव है। वह सबसे बढ़कर है। सबसे ज़्यादा शक्तिशाली है। यह वह चीज़ है जो मामूली आदमीको वीर बना देती

है। अगर मुझे ऐसी सेना दी जाय जिसमें सिर्फ़ प्रेमी-ही-प्रेमी हों तो मैं निश्चय ही विश्व-विजय कर लूँ।'

पासनियस बोला—'बात बिल्कुल ठीक है, फिर भी आपको पार्थिव प्रेम और दिव्य ईश-प्रेमका फ़र्क़ तो मंज़ूर करना ही पड़ेगा। सामान्य प्रेम, रूपमोह, चमड़ीके सौन्दर्यपर लुब्ध मनकी यह दशा होती है कि यौवनके अन्त होते-न-होते उसके पंख जम जाते हैं और वह उड़ जाता है। लेकिन परमात्म-प्रेम सनातन होता है और उसकी गति निरन्तर विकासोन्मुख ही रहती है।'

सुक़रातसे प्रार्थना किये जानेपर वो बोले—'प्रेम ईश्वरीय सौन्दर्यकी भूख है। प्रेमी प्रेमके द्वारा अमरत्वकी तरफ़ बढ़ता है। विद्या, पुण्य, यश, उत्साह, शौर्य, न्याय, श्रद्धा और विश्वास ये सब उस सौन्दर्यके ही रूप हैं। आत्मिक सौन्दर्य ही परम सत्य है। और सत्य वह मार्ग है जो परमेश्वर तक पहुँचा देता है।'

सुक़रातके इस कथनका प्लेटो (अफ़लातून) पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह उसी दिनसे उनका शिष्य हो गया। यही प्लेटो आगे चलकर यूनानका सर्वश्रेष्ठ दार्शनिक कहलाया।

गर्व

यूनानमें एक ज़मींदार था, उसे अपनी सम्पत्ति और जागीरका बड़ा गर्व था। एक बार सुक़रातके सामने वह अपने वैभवकी शान छाँटने लगा। कुछ देरतक तो सुक़रात चुपचाप सुनते रहे। बादमें उन्होंने दुनियाका एक नक़शा मँगाया। नक़शा फैलाकर वह जमींदारसे बोले—'आप इसमें अपना यूनान देश देखते हैं?'

'यह रहा यूनान,' ज़मींदारने नक़शेपर अँगुली रखकर बताया।

'और अपना ऐटिका प्रान्त?' सुक़रातने पूछा।

कठिनाईसे कुछ देरमें ज़मींदार उस छोटे प्रान्तको ढूँढ़ सका।

उससे फिर पूछा गया— 'इसमें आपकी जागीर कहाँ है ?'

'भगवन् ! नक़शेमें इतनी छोटी जागीर कैसे बताई जा सकती है ?' ज़मींदारने जवाब दिया।

अब सुक़रातने कहा—'भाई ! इतने बड़े नक़शेमें जिसके लिए एक बिन्दु भी नहीं रक्खा जा सकता उस ज़रा-सी ज़मीनपर तुम गर्व करते हो ! और समूचे ब्रह्माण्डके सामने तुम्हारी जागीर और तुम कहाँ हो और कितने हो ? इतनी क्षुद्रतापर इतना गर्व !'

सभ्यता

फ्रांसका बादशाह हैनरी एक बार अपने अंगरक्षकों और ऊँचे अफ़सरोंके साथ कहीं जा रहा था। रास्तेमें एक भिखारीने अपनी टोपी उतारकर और सिर झुकाकर उसे नमस्कार किया। हैनरीने भी अपनी टोपी उतार-कर सिर झुकाकर भिखारीको नमस्कार किया। यह देखकर एक अफ़सरने कहा—'श्रीमान् ! एक भिखारीका आप इस तरह अभिवादन करें, यह क्या मुनासिब है ?'

हैनरीने सरल भावसे कहा—'फ्रांसका बादशाह क्या एक भिखारीके बराबर भी सभ्य नहीं ?'

पवित्र अन्न

गुरु नानक घूमते हुए एक गाँवमें रुके। एक लुहार मक्काकी दो रोटियाँ लेकर आया। उस गाँवका ज़मींदार भी उत्तम पकवान बनवा कर लाया। उन्होंने ज़मींदारके पकवानोंको छोड़ कर लुहारकी रोटियाँ खा लीं।

ज़मींदारको दुःख हुआ। उसने अपने लाये हुए भोजनके स्वीकार न किये जानेका कारण पूछा। गुरु नानकदेवने एक हाथमें लुहारकी रोटियोंमेंसे बचा हुआ एक टुकड़ा लिया और दबाया तो उससे दूधकी बूँदें टपकीं। फिर ज़मींदारकी लाई हुई मिठाईका एक टुकड़ा दबाया तो उससे ख़ूनकी बूँदें निकलीं।

गुरु नानकने बताया—'लुहारने मेहनत करके कमाया है। इसलिए वह शुद्ध अन्न है। उससे निर्मलता बढ़ेगी। तुम्हारा अन्न दूसरोंको सताकर, उनका हक मारकर, लाया गया है। इसलिए यह अपवित्र रक्तान्न है। इस अन्नसे पापवृत्तियाँ प्रबल होंगी।'

नामदेव

'अरे नामू! तेरी धोतीमें ख़ून कैसे लग रहा है?'

'यह तो माँ, मैंने कुल्हाड़ीसे पैरको छील कर देखा था।' चमड़ी छिली हुई देख कर माँ बोली—'नामू! तू बड़ा मूर्ख है। कोई इस तरह अपने पैरको छीलता होगा! घाव पक जाय या सड़ जाय तो पैर कटवाने तककी नौबत आ जाती है।'

'तब पेड़को भी कुल्हाड़ीसे चोट लगती होगी। उस दिन तेरे कहनेसे मैं पलासके पेड़की छाल काटकर लाया था न? मैंने सोचा कि अपने पैरकी भी छाल उतार कर देखूँ। पलासके पेड़को कैसा लगा होगा यह जाननेके लिए मैंने ऐसा किया माँ!'

नामदेवकी माँ रो पड़ी। बोली—'बेटा नामू! मालूम होता है तू एक दिन महान् साधु होगा। पेड़ों और दूसरे जीवोंमे भी जान है। चोट लगनेपर जैसे हमें दुःख होता है वैसे ही उन्हें भी होता है।'

बड़ा होनेपर वही नामू प्रसिद्ध भक्त नामदेव हुए।

एकनाथ

पैठणमें कुछ दुष्टोंने घोषणा की कि, 'जो एकनाथको क्रोध दिला देगा उसे दो सौ रुपये इनाम दिया जायेगा।' एक ब्राह्मण नौजवानने बीड़ा उठाया। वह एकनाथ महाराजके घर पहुँचा। उस समय एकनाथजी पूजा कर रहे थे। वह सीधा पूजाघरमें जाकर उनकी गोदमें जा बैठा। उसने सोचा कि इस तरह अशुद्ध होजानेपर एकनाथजीको क्रोध ज़रूर आयेगा। लेकिन उन्होंने हँस कर कहा—'भैया! तुम्हे देख कर मुझे बड़ा आनन्द हुआ। मिलते तो बहुतसे लोग हैं, पर तुम्हारा प्रेम तो विलक्षण है।' वह देखता ही रह गया। समझ गया कि इन्हें क्रोध दिलाना बहुत मुश्किल है, मगर दो सौ रुपयेके लोभके मारे उसने अगले दिन फिर कोशिश की। भोजनके वक़्त जा पहुँचा। उसका आसन भी एकनाथजीके पास ही लगाया गया। भोजन परोसा गया। घी परोसनेके लिए एकनाथजीकी पत्नी गिरिजाबाई आई। उन्होंने ज्योंही झुककर ब्राह्मणको दालमें घी डालना चाहा, त्योंही वह लपक कर उनकी पीठपर चढ़ गया।

एकनाथजीने कहा—'देखना, ब्राह्मण कहीं गिर न पड़े!' गिरिजाबाईने मुसकराते हुए कहा—'मुझे बेटा हरिको पीठपर लादे काम करनेका अभ्यास है। इस बच्चेको मैं कैसे गिरने दूँगी!' इससे तो ब्राह्मण युवककी सारी आशा टूट गई। वह एकनाथजीके चरणोंमें गिर कर क्षमा माँगने लगा।

अन्त

एथेन्समें सोलन नामक एक महान् दार्शनिक रहता था। एक बार वह लीडियाके राजा कारूँके यहाँ पहुँचा। कारूँ बहुत धनवान् था। उसे अपनी सम्पत्तिका बड़ा गर्व था। उसने सोलनको अपनी अतुल धनराशि

दिखला कर यह कहलाना चाहा कि उससे बढ़ कर दुनियामें और कोई सुखी नहीं है। पर सोलनके दिलपर उसके वैभवका कोई असर नहीं पड़ा। उसने सिर्फ़ यही कहा कि, 'संसारमें सुखी वही कहा जा सकता है जिसका अन्त सुखमय हो।' कारूँको इससे नागवार खातिर हुआ और उसने सोलनको बिना किसी सत्कारके अपने यहाँसे विदा कर दिया।

कालान्तरमें कारूँने पारसके राजा साइरसपर चढ़ाई कर दी। वहाँ वह हार कर गिरफ़्तार हो गया। साइरसने उसे ज़िन्दा जला दिये जानेका हुक्म दे दिया। उस वक़्त उसे सोलन याद आया। वह 'सोलन! सोलन! सोलन!' चिल्लाने लगा। जब साइरसने इसका तात्पर्य पूछा तो उसने सोलनकी बातें सुना दीं। इसका साइरसपर बड़ा प्रभाव पड़ा। उसने कारूँको छोड़ दिया।

महल

एक मस्त फ़क़ीर एक महलमें घुस गया और इत्मीनानसे आराम करने लगा।

बादशाह आया। उसने फ़क़ीरसे झिड़क कर पूछा—

'तुम यहाँ किसकी इजाज़तसे आये?'

'धर्मशालामें आनेके लिए किसीकी इजाज़तकी ज़रूरत होती है क्या?' फ़क़ीर बोला।

'यह धर्मशाला नहीं, मेरा महल है!'

'अच्छा, तुमसे पहले यहाँ कौन रहता था?'

'मेरे पिता।'

'उनसे पहले?'

'उनके पिता।'

'वह मकान जिसमें एकके बाद दूसरा आता है और चला जाता है वह धर्मशाला नहीं तो क्या है?'

नम्रता

ऐटम युगके प्रवर्तक अलबर्ट आइन्स्टीन संसारके सबसे महान् वैज्ञानिक थे।

इज़राइलके प्रेसीडेण्ट डॉक्टर चैम वैज़मैनके मरनेपर आइन्स्टीनसे प्रेसीडेण्ट पद स्वीकार करनेकी प्रार्थना की गई। लेकिन उन्होंने वहाँकी सरकारके इस प्रस्तावको अस्वीकार करते हुए कहा—'इसके लिए आपका बड़ा आभारी हूँ, मगर मैं इस पदके योग्य नहीं हूँ; क्योंकि जन-सेवा-कार्य या राजनीतिक क्षेत्रमें काम करनेके लिए मैं अपनेको ज़रा भी दक्ष या कुशल नहीं मानता।'

दुःख

हकीम लुक़मान महान् तत्त्वज्ञानी थे। बचपनमें वे ग़ुलाम थे। उनके मालिकने एक बार उन्हें कड़वी ककड़ी खानेको दी। मालिकने सोचा था कि लुक़मान इसे चखते ही फेंक देगा; मगर लुक़मान तो बिना मुँह बनाये सारी ककड़ी खा गये!

'तू ऐसी कड़वी ककड़ी कैसे खा सका?'

'मेरे उदार स्वामी! आप मुझे रोज़ स्वादिष्ट चीज़ें प्रेमसे खिलाते हैं। और भी तरह-तरहके सुख भोगता हूँ। एक दिन आपके हाथसे कड़वी ककड़ी मिली तो आनन्दसे क्यों न खाऊँ?' लुक़मान बोले।

वह आदमी समझदार और दयालु था। उसने लुक़मानका बड़ा आदर किया और बोला—'तुमने मुझे सबक़ दिया है कि जो परमात्मा हमें तरह-तरहके सुख देता है उसके हाथसे अगर कभी दुःख भी मिले तो उसे ख़ुशीसे भोगना चाहिए। आजसे तुम्हें ग़ुलामीसे आज़ाद करता हूँ।'

ग़नीमत

सन्त उसमान हैरी किसी गलीसे जा रहे थे। एक मकानकी छतसे किसीने बिना देखे थालीभर राख फेंक दी। वह हैरीके सिरपर गिरी। झाड़-झूड़कर हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हुए बोले—'दयामय प्रभो! तुझे धन्यवाद!'

एक आदमीने यह देखकर पूछा—'इसमें ईश्वरको धन्यवाद देनेकी क्या बात है?'

बोले—'मैं तो आगमें जलाये जाने लायक़ हूँ। लेकिन उस रहीम और करीमने सिर्फ़ राखसे ही निपटा दिया!'

साधु

एक साधुसे हज़रत इब्राहीमने पूछा—'सच्चे साधुका लक्षण क्या है?'

साधुने जवाब दिया—'मिला तो खा लिया, न मिला तो सन्तोष कर लिया।'

हज़रत इब्राहीम हँसे—'यह तो हर कुत्ता करता है।'

साधुने कहा—'तब आप ही साधुका लक्षण बतायें।'

इब्राहीम बोले—'मिला तो बाँटकर खाया और न मिला तो खुश हुआ कि दयामय भगवान्‌ने कृपा करके उसे तपस्याका सुअवसर प्रदान किया।'

मुझे देखो!

हाजी मुहम्मद एक मुसलमान सन्त थे। वे साठ बार हज कर आये थे और पाँचों वक़्तकी नमाज़ पढ़ा करते थे। एक दिन उन्होंने सपना देखा—

एक फ़रिश्ता स्वर्ग और नरकके बीच खड़ा है। वह लोगोंको कर्मानुसार स्वर्ग या नरक भेज रहा है। जब हाजी मुहम्मद सामने आये तो उसने पूछा—

'तुमने क्या शुभ कर्म किये हैं ?'

'मैंने साठ बार हज किया है।'

'सच है; मगर नाम पूछे जानेपर तुम गर्वसे 'मैं हाजी मुहम्मद हूँ' कहते रहे हो। इस गर्वके कारण तुम्हारा हज करनेका पुण्य नष्ट होगया। और कोई अच्छा काम किया हो तो बताओ।'

'मैं साठ सालसे पाँचों वक़्तकी नमाज़ पढ़ता रहा हूँ।'

'तुम्हारा वह पुण्य भी नष्ट हो गया। एक दिन बाहरके धर्मजिज्ञासु तुम्हारे पास आये थे। तुमने उन्हें दिखानेकी ग़रज़से उस दिन और दिनोंसे ज़्यादा देर तक नमाज़ पढ़ी थी। इस दिखावेके भावकी वजहसे तुम्हारी वह साठ बरसकी तपस्या नष्ट हो गई।'

इसके बाद हाजीजीकी आँख खुल गई। उन्होंने ग़रूर और नुमाइशसे हमेशाके लिए तौबा कर ली।

सेवक

हज़रत इब्राहीम बलखके बादशाह थे। उन्होंने एक ग़ुलाम खरीदा। अपनी स्वाभाविक उदारतासे उन्होंने ग़ुलामसे पूछा—

'तेरा नाम क्या है ?'

'जिस नामसे आप मुझे पुकारें।'

'तू क्या खायेगा ?'

'जो आप खिलायें।'

'तुझे कपड़े कैसे पसन्द हैं ?'

'जो आप पहिना दें।'

'तू क्या काम करेगा ?'

'जो आप करायें ।'

'तू क्या चाहता है ?'

'हुजूर ! गुलामकी अपनी चाह क्या !'

बादशाह तख्तसे उठकर बोले—'तुम मेरे उस्ताद हो। तुमने मुझे सिखा दिया कि प्रभुके सेवकको कैसा होना चाहिए।'

भक्त

मुहम्मद सैयद एक बड़े सन्त थे। वे नितान्त निष्परिग्रही थे। दिगम्बर रहते थे। शाहजहाँ इन्हें बहुत मानता था। दाराशिकोह तो इनका भक्त ही था। वे अकसर एक गीत गाया करते थे, जिसका भाव है—

'मैं सच्चे सन्त भक्त फ़ुरकनका शिष्य हूँ। मैं यहूदी भी हूँ, हिन्दू भी, मुसलमान भी। मसजिद और मन्दिरमें लोग एक ही परमात्माकी उपासना करते हैं। जो काबेमें संगे-असवद है वही दैरमें बुत है।'

औरंगजेब दाराका शत्रु था। वह सैयद साहबसे भी चिढ़ता था। उसने उन्हें पकड़वा मँगाया। धर्मान्ध मुल्लाओंने उन्हें धर्म-द्रोही घोषित कर सूलीकी सज़ा सुना दी। पर सैयद साहबको इससे बड़ी खुशी हुई। वे सूलीकी बात सुनकर आनन्दसे उछल पड़े! सूलीपर चढ़ते हुए बोले—'आह ! आजका दिन मेरे लिए बड़े सौभाग्यका है। जो शरीर प्रियतमसे मिलनेमें बाधक था वह इस सूलीकी बदौलत छूट जायेगा। मेरे दोस्त ! आज तू सूलीके रूपमें आया। तू किसी भी रूपमें क्यों न आवे मैं तुझे पहचानता हूँ।'

आचरण

एक आदमीने अपने लड़केको किसी महात्माके सामने पेश करते हुए कहा—'महाराज, यह गुड़ बहुत खाता है। किसी तरह इसकी यह आदत छुड़ाइए।'

महात्माने कहा—'पन्द्रह दिन बाद इसे मेरे पास लाना, तब उपाय करूँगा।'

पन्द्रह दिन बाद लड़का फिर लाया गया। महात्माजीने उससे प्यारसे कहा—'बेटा, अब गुड़ कभी न खाना।' उसी दिनसे लड़केने गुड़ खाना छोड़ दिया।

एक रोज़ लड़केके पिताने महात्माजीसे कहा—'अब वह गुड़ क़तई नहीं खाता। आपके उपदेशने जादूका-सा काम किया। लेकिन कृपया इस बातका रहस्य बताइए कि आपने वह उपदेश उसी दिन न देकर पन्द्रह दिन बाद क्यों दिया?' महात्माने हँसकर कहा—'भाई, जो स्वयं आचरण न करे उसे उपदेश देनेका अधिकार नहीं है। उसके उपदेशका असर नहीं होता। उस वक़्त मैं खुद गुड़ खाता था। स्वयं त्यागके दृढ़ हो जानेके बाद मैंने उसे त्यागका उपदेश दिया।'

असाधु

एक साधु किसी नदीके किनारे ध्यानावस्थित थे। पास ही एक धोबी कपड़े धो रहा था। दुपहरको खाना खाने घर जाते वक़्त धोबीने साधुसे कहा—'अरे ओ गुमसुम! ज़रा मेरे गधोंको देखते रहना। मैं अभी आया रोटी खाकर घंटा भरमें।'

धोबी लौटा तो एक गधा कम पाया। वह चरते-चरते किसी नीची जगह चला गया था और नज़र नहीं आता था।

धोबीने साधुको ललकारा। बुरा-भला कहा। गाली-गलौज दी। भिड़ भी पड़ा। साधुसे जब बरदाश्त न हुआ तो उसे भी ताव चढ़ आया। अब क्या था! दोनोंसे गुत्थमगुत्थ होने लगी। धोबी बलवान् था। उसने साधुको पछाड़ दिया और सीनेपर चढ़ बैठा।

साधुने शिकायत-भरे लहजेमें पुकारा—'मैं इतने दिनोंसे तपस्या करता रहा हूँ। पर आज विपत्तिके समय कोई देव तक मेरी रक्षाको नहीं आ रहा !'

एक आवाज़ आई—'देव तो रक्षाको आया है, मगर उसे यह नहीं मालूम हो रहा कि साधु कौन है और धोबी कौन।'

सिद्धि

एक साधक था। साधन करनेसे उसे पानीपर चलनेकी सिद्धि प्राप्त हो गई। वह गुरुके पास दौड़ा आया—

'महाराज ! मुझे जलपर चलनेकी सिद्धि प्राप्त हो गई !!'

महात्मा बोले—'इसमें क्या हुआ ? यह काम तो मल्लाह एक पैसेसे कर देता है। क्या तुमने इतनी तपस्या इस तुच्छ शक्तिको पानेके लिए ही की थी ? तप केवल भगवत्-प्राप्तिके लिए होना चाहिए।'

नींद

एक तपस्वी सारी रात भजन करते रहते थे। किसीने पूछा—'आप रातको कुछ देर सो भी क्यों नहीं लेते ?'

महात्मा बोले—'जिसके नीचे नरकाग्नि जल रही हो और ऊपर जिसे दिव्य राज्य बुला रहा हो, उसे नींद कैसे आ सकती है ?'

बलि

स्वर्ग-प्राप्तिकी लालसासे एक राजा यज्ञ कर रहा था। यज्ञमें बलि देनेके लिए एक बकरा लाया गया। वह अपनी होनीका आभास पाकर बेहद मिमिया रहा था। राजाने विनोदसे अपने मन्त्रीसे पूछा—'यह बकरा क्या कह रहा है ?'

मन्त्री—'यह आपसे कुछ अर्ज़ कर रहा है।'

राजा—'क्या कह रहा है ?'

मन्त्री—'यह कहता है कि मुझे स्वर्ग नहीं चाहिए। मैंने स्वर्ग जानेकी आपसे कब इच्छा प्रकट की थी ? मैं तो घास खाकर ही सन्तुष्ट हूँ, स्वर्गके दिव्य भोग मुझे नहीं चाहिएँ। अगर यज्ञमें बलि दिये जाने पर प्राणी स्वर्ग चला जाता है तो तुम अपने बाप, माँ, स्त्री, लड़के, लड़कियोंकी या खुद अपनी बलि देकर स्वर्ग क्यों नहीं चले जाते ?'

राजा बड़ा शर्मिन्दा हुआ। उसने बकरेको छोड़ दिया और यज्ञ बन्द करा दिया।

ईश-प्राप्ति

एक साधकने अपने सद्‌गुरुसे पूछा—'प्रभु-प्राप्तिका उपाय क्या है भगवन् ! मुझे साधना करते-करते इतने दिन हो गये मगर सफलता नहीं मिली।'

गुरु उस वक़्त चुप रह गये। लेकिन एक दिन नदीमें स्नान करते वक़्त उन्होंने उसे पानीमें धर दबाया। कुछ देर बाद वह छटपटाकर बाहर निकला। गुरुने पूछा—'पानीसे निकलनेकी कैसी आतुरता थी तुम्हारे दिलमें ? जब भवजलसे बाहर निकलकर प्रभुसे मिलनेके लिए यूँ ही व्याकुल हो उठोगे तभी प्रभु-प्राप्ति हो जायेगी।'

चोर

वृन्दावनके सन्त ग्वारिया बाबा एक दिन अपनी मस्तीमें पड़े हुए थे कि दो चोर आ गये। पूछने लगे—'तुम कौन हो ?'

'तुम कौन हो ?'

'हम चोर हैं।'

'हम भी चोर हैं।'

'तो तुम भी हमारे साथ चोरी करने चलो।'

'चलो।'

तीनों चले। एक घरमें घुस गये। चोरोंने सामान बाँधते हुए कहा—

'तुम भी बाँधो।'

'तुम ही बाँधो', महात्मा बोले।

इधर सामान बँधा, उधर महाराजकी नज़र एक ढोलक पर पड़ गई। फिर क्या था! मौज आ गई—उठाकर लगे ज़ोरोंसे बजाने!

जाग पड़ गई। 'चोर-चोर'का हल्ला मचने लगा। चोर तो भाग गये, मगर बाबाकी ढोलक दमादम बजती रही। लोगोंने बिना देखे-भाले उन्हें पीटना शुरू कर दिया। बड़ी मार पड़ी। यहाँ तक कि लोहू-लुहान हो गये। मगर उन्होंने किसीको पीटनेसे रोका नहीं और लगातार ढोलक पीटते रहे। आखिर बेहोश होकर जा पड़े। तब कहीं लोगोंने पहचाना—'अरे ये तो ग्वारिया बाबा हैं!'

'महाराज' आप यहाँ कैसे आ गये?'

'आया कैसे! श्यामसुन्दरने कहा—चलो चोरी करने। मैंने कहा चलो। उनके साथ चला आया। यहाँ ढोलक देखकर मेरी इच्छा बजानेकी हो गई।' यह कहकर वो हँस पड़े।

भजनका वज़न!

किसी गाँवमें एक बूढ़ा और उसकी बुढ़िया रहती थी। दोनों बिलकुल अपढ़ और बड़े सीधे स्वभावके थे। उन्हें गिनती तो बीस तक आती थी, पर कच्ची-कच्ची। जब वे भजन करने बैठते तब एक-एक सेर गेहूँ या चना तौलकर अपने-अपने सामने रख लेते। 'राम' कहते जाते और एक-

एक दाना अलग रखते जाते। जब सब दानोंको अलग कर लेते तो समझते कि 'एक सेर भजन हुआ !' इसी तरह कभी दो सेर कभी तीन सेर भजन करते। कभी पाँच सेर भी !

बहुमत

एक पेड़पर एक उल्लू बैठा था। अचानक एक हंस भी उड़ता हुआ आकर उस वृक्षपर बैठ गया।

हंस—'उफ़ ! कैसी गर्मी है ! सूरज आज बड़े प्रचण्ड रूपसे चमक रहा है।'

उल्लू—'सूरज ? सूरज क्या चीज़ है ? कहाँ है सूरज ? इस वक़्त गर्मी है यह तो ठीक है, पर वह तो अँधेरा बढ़ जाने पर हो जाती है।'

हंसने समझानेकी कोशिश की—'सूरज आसमानमें है। उसकी रोशनी दुनियामें फैलती है, उसीसे गर्मी भी फैलती है।'

उल्लू हँसा—'तुमने रोशनी नामकी एक और चीज़ बतलाई ! तुम्हे किसने बहका दिया है ? तुम यह क्या अवस्तुओंकी चर्चा कर रहे हो !'

हंसने समझानेकी बहुतेरी कोशिश की मगर बेकार। आख़िर उल्लू बोला—'अच्छा चलो उस वटवृक्ष तक, वहाँ मेरे सैकड़ों अक़्लमन्द जाति-भाई रहते हैं। उनसे फ़ैसला करा लो।'

हंसने उल्लूकी बात मान ली। दोनों उल्लुओंके समुदायमें पहुँचे, उस उल्लूने कहा—'यह हंस कहता है कि आसमानमें इस वक़्त सूरज चमक रहा है। उसकी रोशनी दुनियामें फैलती है, उसीसे गर्मी भी फैलती है।'

तमाम उल्लू हँस पड़े—'क्या वाहियात बात है ! भाई, न सूरज कोई चीज़ है न रोशनी कोई वस्तु। इस बेवक़ूफ़ हंसके साथ तुम तो बेवक़ूफ़ न बनो !'

सब उल्लू उस हंसको मारने झपटे। ग़नीमत यह थी कि उस वक़्त दिन था, इसलिए हंस सही सलामत बचकर उड़ गया।

हंसने मनमें सोचा—'बहुमत सत्यको असत्य तो कर नहीं सकता। लेकिन जहाँ उल्लुओंका बहुमत हो वहाँ किसी समझदारके लिए सत्यको उनके गले उतार सकना बड़ा मुश्किल है।'

आज़ादी

एक रोज़ किसी दुबले-पतले भेड़ियेकी एक मोटे-ताज़े कुत्तेसे मुलाक़ात हो गयी।

भेड़ियेने कुत्तेसे उसकी तुन्दी और ताज़गीका रहस्य पूछा। कुत्ता बोला—'मेरा मालिक मुझे अच्छे-अच्छे पौष्टिक खाने खिलाता है। तुम भी मेरे साथ रहो तो तुम भी ऐसे हो जाओ।'

भेड़िया—'तुम्हें अपने मालिकका क्या काम करना पड़ता है?'

कुत्ता—'सिर्फ़ घरकी रखवाली करना।'

भेड़ियेने इस कार्यके लिए अपनेको समर्थ माना और कुत्तेके यहाँ चलनेको रज़ामन्द हो गया।

दोनों शहरकी तरफ़ आ रहे थे कि भेड़ियेकी नज़र कुत्तेकी गरदनपर पड़ी। उसने पूछा—'तुम्हारी गरदनपर यह निशान कैसा है?'

कुत्ता—'यह तो पट्टेका निशान है। दिनमें मेरा मालिक मुझे बाँध देता है ताकि लोगोंको तंग न करूँ। रातको घरकी रखवालीके लिए छोड़ देता है। तुम रहोगे तो तुम्हें भी ऐसा पट्टा पहनना पड़ेगा।'

भेड़िया उलटे पैरों फिरने लगा—'मुझे जंगलमें आज़ाद रहकर रूखा-सूखा खाना मंज़ूर है; पर तुम्हारे मालिकका बँधुआ होकर मोटा-ताज़ा बनना मंज़ूर नहीं।'

'मिले ख़ुश्क रोटी जो आज़ाद रहकर!
ग़ुलामीके हलवेसे हरचन्द बढ़कर!!'

भावना

एक स्त्री किसी साधुसे प्रार्थना करती हुई बोली—'महाराज, आज कृपा करके हमारे घर पधार कर हमें कृतार्थ कीजिए ।'

साधु उसके यहाँ गया । स्त्रीने उसके लिए एक कटोरीमें दूध डाला, मगर जब दूध डालते वक़्त हंडियाकी सारी मलाई कटोरीमे गिरी तो स्त्रीके मुँहसे बेसाख्ता 'अरे-अरे !' निकल पड़ा । फिर भी उसने उसमें शक्कर मिला कर दूध साधुके आगे सरका दिया ।

साधु ज्ञान-उपदेशकी बातें करता रहा, मगर उसने दूध न पिया । स्त्री समझती रही कि शायद दूध अभी बहुत गरम है इसलिए नहीं पी रहे । जब चर्चा खत्म हुई तो साधु यूँ ही चलने लगा ।

'महाराज, दूध तो पीजिए !'

'नहीं । तुमने इसमें मलाई और शक्करके अलावा एक और चीज़ भी मिला दी है, इसलिए मैं इस दूधको नहीं पी सकता ।'

'और क्या मिला दिया है, महाराज ?'

'अरे-अरे !' जिस दूधमें 'अरे, अरे !' मिला हुआ है, मैं उसे नहीं पी सकता ।'

संगति

एक कुत्ते और एक बिल्लीमें बड़ी दोस्ती थी । दोनों प्रेमसे साथ रहते । एक रोज़ वे एक साधुमे मिलने आये, और विनोदमें एक दूसरेकी शिकायत करने लगे ।

कुत्ता बोला—'महाराज, यह बिल्ली बड़ी बदमाश और चालाक है । बड़ी ही बुरी है । यह मर कर अगले जन्ममें क्या बनेगी ?'

बिल्ली बीच ही में बोल उठी—'और महाराज, यह कुत्ता महा ख़राब है, हमेशा भौंकता या गुर्राता रहता है । यह मर कर क्या बनेगा ?'

साधु कहने लगे—'अच्छा होता कि ये सवाल मुझसे न पूछे जाते। ख़ैर जब पूछते ही हो तो सुनो—यह बिल्ली निरन्तर तुम्हारा संग करती है इससे तुममें इसकी आदतें और स्वभाव लगातार आता रहता है। इसलिए तुम अगले जन्ममें बिल्ली बनोगे। और बिल्ली बाई, चूँकि तुम सदा कुत्तेके साथ रहती हो और यूँ उसके गुण-दोष ग्रहण करती रहती हो, इसलिए तुम अगले जन्ममें कुत्ता बनोगी।'

वीर

एक बार दो राजपूत नौकरीके लिए बादशाह अकबरके दरबारमें गये। अकबरने उनकी ख़ूबियाँ पूछीं। उन्होंने कहा—'हम वीर हैं।' बादशाहने पूछा कि तुम्हारी वीरताका सबूत क्या है ? यह सुनते ही दोनोंने म्यानोंसे अपनी-अपनी बिजली-सी तलवारें खींच लीं और उन्हें एक दूसरेके सीनेके पार कर दिया ! और यूँ बादशाहको अपनी वीरताका सबूत दे दिया।

शान्ति और अशान्ति

एक कमरेके अन्दर हर तरफ़ बहुत-से छोटे-छोटे दर्पण लगे हुए थे। उसमें एक कुत्ता घुस आया। हर दर्पणमें कुत्ता देख-देखकर भौंकने लगा। और भौंक-भौंककर क्लेश और दुःखसे मर गया।

उसी कमरेमें कभी एक सुन्दर राजकुमार आया। वह हर दर्पणमें अपनी मनोहर छबि देख-देखकर आनन्द मनाता रहा।

दुनियामें बुरा आदमी हर तरफ़ बुराई देखकर दुखी होता है, अच्छा आदमी हर चीज़में अच्छाई देखकर सुखी होता है; और अगर वह प्रभुमय है तो हर वस्तुको प्रभुमय देखता है।

कल्पना

एक आदमी बहुत भूखा था, मगर उसे कुछ खानेको नहीं मिल रहा था। आखिर उसे एक तदबीर सूझी। वह एक जगह आँखें बन्द करके बैठ गया और कल्पना करने लगा कि उसके सामने गरमागरम चटपटी मसालेदार कढ़ी है और वह उसे दबादब खाये जा रहा है और उसका मुँह जलता जा रहा है। इस कल्पनाकी कढ़ीसे मुँह जलनेके कारण वह 'सी सी' भी करता जा रहा था।

इतनेमें एक आदमी उधरसे गुज़रा। उसने पूछा—'भाई, यह 'सी-सी' क्यों कर रहे हो ?'

'कल्पनाकी गरम-गरम कढ़ी खा रहा हूँ।' आगन्तुक बोला—'अगर कल्पनाका ही आहार लेना है तो कढ़ी सरीखी मामूली चीज़ क्यों खाते हो, बढ़िया बढ़िया मिठाइयाँ क्यों नहीं खाते ?'

उद्धार

एक सन्त हमेशा लोगोंका भला करनेमें लगे रहते थे, तो भी कुछ दुष्टात्मा उन्हें अकारण कष्ट दिया करते थे।

एक रोज़ एक दुर्जन उनके पास आकर यद्वा-तद्वा बकने लगा। सन्तने उसे प्रेमपूर्वक समझानेका प्रयत्न किया; मगर वह तो गालियाँ देने लगा !

कुछ देर बाद सन्त अपने घरकी ओर चले तो वह आदमी भी गाली देता हुआ उनके पीछे-पीछे चलने लगा। जब घर आ गया तो सन्त बोले—'भाई, अब तू मेरे घर ही रह, ताकि गालियाँ देनेके लिए तुझे चलकर न आना पड़े।'

वह आदमी सचमुच सन्तके घर रहनेके लिए तैयार हो गया। वहाँ रहकर सन्तका उच्च जीवन देखकर वह बड़ा शर्मिन्दा हुआ। उसके बाद तो वह वहाँ रहकर सन्तकी सेवा भी करने लगा।

एक दिन सन्त बोले—'भाई, अब तू अपने घर जा।'

'नहीं, मुझे यहीं रहने दीजिए', आदमीने जवाब दिया।

सन्त कहने लगे—'भले रह, पर एक शर्त पर कि जब मैं कुछ बुरा काम करूँ तू मुझे गाली दिया करना।'

सुनकर आदमीकी आँखोंमें आँसू आ गये।

शम्स तबरेज़

हिन्दुस्तानमें शम्स तबरेज़ नामक एक महान् साधु था। वह ईश्वरके दिव्य स्वरूपके अलावा किसी और हस्तीका क़ायल नहीं था। वह प्रभुमय था और प्रभुरूपसे विचरता था।

एक रोज़ किसीने एक मरा हुआ लड़का उसके सामने लाकर रख दिया और उसे ज़िन्दा कर देनेकी प्रार्थना की।

शम्स तबरेज़ बोले—'क़ुम बिस्मिल्लाह।' (उठ खुदाके नामसे)। पर लड़का ज़िन्दा न हुआ। उन्होंने फिर दुहराया—'क़ुम बिस्मिल्लाह।' लेकिन लड़केमें जान न लौटी। उन्होंने फिर कहा—'उठ खुदाके नामसे।' मगर वह नहीं उठा। तब शम्स तबरेज बोले—'क़ुम बिज़्ज़नी' (उठ मेरे हुक्मसे)।

लड़का जीकर उठ खड़ा हुआ!

चाँदी

एक दिन एक कंजूस दौलतमन्द किसी ज्ञानीके पास आया। ज्ञानी उसे एक शीशेकी खिड़कीके पास ले गया।

ज्ञानी—'इसमेंसे देखकर बताओ क्या नज़र आता है।'

कंजूस—'लोग।'

ज्ञानी तब उसे एक दर्पणके सामने ले गया !

'अब क्या दिखाई देता है ?'

'मैं अपने आपको देख रहा हूँ !'

'देखो', ज्ञानी बोला, 'खिड़कीमें भी काच है और दर्पणमें भी काच है। लेकिन दर्पणके काचमें ज़रा चाँदी लगी हुई है और ज्योंही चाँदी आई कि तुम औरोंको देखना बन्द कर देते हो और सिर्फ़ ख़ुदको देखने लगते हो।'

महँगे भोग

एक जंगली गधेने एक पालतू गधेको आरामसे बढ़िया-बढ़िया खाने खाते देखा। वह उसके सौभाग्यपर उसे मुबारकबादियाँ देने लगा। लेकिन कुछ देर बाद उसने देखा कि उसकी पीठपर भारी बोझा लदा हुआ है और पीछेसे एक आदमी उसे एक डंडेसे मारता हुआ हाँक रहा है। वह बोला, 'अब मैं तुम्हें बधाइयाँ नहीं दे सकता, क्योंकि मैं देखता हूँ कि डटकर मालमलीदा उड़ानेकी तुम्हें भारी क़ीमत चुकानी पड़ती है।'

वाग्भट

एक शिकारी शेरके आने-जानेके रास्तेकी जानकारी प्राप्त कर रहा था। उसने जंगलके एक निवासीसे पूछा—'शेरकी माँद कहाँ है ?'

'माँद क्या, मैं तुम्हें शेर ही दिखाये देता हूँ—देखो वह खड़ा है तुम्हारे पीछे।'

सुनते ही शिकारी डरके मारे पीला पड़ गया और उसकी घिग्घी बँध गई।

कायर प्रलाप करते हैं, शूरवीर करके दिखाते हैं।

तोहफ़ा

यूनानका राजा सिकन्दर महान् जब भारत-विजयकी इच्छासे चला तो उसने अपने गुरु अरस्तू (Aristotle) से पूछा—

'आपके लिए भारतसे क्या लाऊँ ?'

अरस्तू बोले—

'मेरे लिए वहाँसे ऐसा गुरु लाना जो मुझे ब्रह्मज्ञान दे सके।'

शान्ति

एक सख्त गरम दिन एक शेर और एक रीछ किसी छोटे तालाबपर पानी पीने आये। पहले पानी कौन पिये इसपर दोनों जानकी बाजी लगाकर लड़ने लगे। साँस लेनेके लिए क्षणभर रुके तो देखा कि कुछ गिद्ध उनमेंसे किसीके मरनेपर खानेके इन्तज़ारमें बैठे हैं। इस नज़ारेको देखकर उन्होंने लड़ना बन्द कर दिया। बोले—'गिद्धों और कौओंसे खाये जानेसे यह बहतर है कि हम दोस्त बन जायँ।'

मजनूँ

किसीने मजनूँको इत्तिला दी कि 'अल्लाह मियाँ आपसे मिलने आये हैं।'

मजनूँ बोला—'उनसे कह दो कि लैला बनकर आना चाहें तो मिल सकते हैं, वर्ना मुझे फ़ुर्सत नहीं है।'

मौत

एक बूढ़ा कमज़ोर लकड़हारा लकड़ियोंका एक भारी गट्ठा सिरपर लिये जा रहा था। कष्टसे दुखी होकर उसने वह गट्ठा सिरसे फेंक दिया

और बिलख कर कहने लगा—'इससे तो मौत आ जाती तो अच्छा था !'

उसका यह चाहना था कि मौत आकर खड़ी हो गई ! 'मैं हाज़िर हूँ। बता तूने मुझे क्यों याद किया है ?'

मौतको देखकर बूढ़ा भयसे थर-थर काँपने लगा। बोला—'मैंने तुझे सिर्फ़ इसलिए बुलाया है कि यह बोझा उठाकर मेरे सिरपर रख दे।'

अहंकार

भरत चक्रवर्ती छह खण्ड जीतकर जब वृषभाचल पर्वतपर अपना नाम लिखने गये, तब उन्हें अभिमान हुआ कि मैं ही ऐसा चक्रवर्ती हुआ हूँ जिसका इस पर्वतपर नाम रहेगा। लेकिन पहाड़पर पहुँचनेपर उन्होंने देखा कि वहाँ तो उनसे पहले बेशुमार चक्रवर्ती आ-आकर अपना नाम लिख गये हैं। नया नाम लिखनेको जगह तक न थी। यह देखकर उनका गर्व खर्व हो गया। आखिर एक नाम मिटाकर अपना नाम लिखा।

दीक्षा

एक बालक एक धर्मगुरुके पास दीक्षा लेने गया। गुरुने इसके लिए उसके पिताकी अनुमति चाही। बालकने माँसे आकर कहा—'माँ अपने स्वेच्छाचारी जीवनको छोड़ चुकी थी और अपने पुत्रका भी कल्याण चाहती थी। बोली—'बेटा, उनसे कहना कि मेरे पिताका नाम तो मेरी माँको भी नहीं मालूम।'

बालकने माँका सन्देश गुरुको सुना दिया। गुरुने उसकी माँकी सत्यवादितासे प्रभावित होकर सहर्ष दीक्षा दे दी।

एक वेश्या-पुत्रको दीक्षा देनेके कारण गुरुकी आलोचनाएँ होने लगीं।

गुरुने समझाया—'घृणा पापसे करना चाहिए, पापीसे नहीं। धर्म पतित-पावन है। वह पापी-से-पापीका उद्धार कर सकता है। वेश्या भी अपने पापोंका प्रायश्चित्त कर तपोबलसे पवित्र बन सकती है। फिर यह तो निर्दोष बालक है। अगर पाप किया भी है तो इसकी माँने किया है, उसका दण्ड इसे क्यों मिले?'

सेवा

हज़रत मुहम्मद मसजिदमें नमाज़ पढ़ने जाते तो रास्तेमें एक बुढ़िया उनपर कूड़ा डालकर रोज़ तंग किया करती। हज़रत यह उपसर्ग शान्त भावसे सहकर ईश्वरसे प्रार्थना करते कि उसे सद्बुद्धि दे।

एक दिन मुहम्मद साहबने देखा कि बुढ़ियाने कूड़ा नहीं डाला। वे उसके यहाँ गये। मालूम हुआ कि वह बीमार है। वे अपना सब काम छोड़कर उसकी तीमारदारी करने लगे। बुढ़ियाने जब उन्हें यूँ सेवा करते देखा तो वह शर्मसे पानी-पानी हो गई और उनके धर्ममें दीक्षित हो गई।

पाठ

कौरव और पाण्डव जब बचपनमें पढ़ा करते थे तो एक दिन उन्हें पढ़ाया गया—'सच बोलो। क्रोध न करो।'

अगले दिन सिवाय युधिष्ठिरके सबने यह पाठ फरफर सुना दिया।

गुरुजी बोले—'युधिष्ठिर, तू बड़ा मन्दबुद्धि है। तू इतना छोटा पाठ भी याद करके न ला सका!'

युधिष्ठिर बोले—'गुरुजी, मैं अपनी मन्दबुद्धिपर लज्जित हूँ। पर एक दिनमें तो क्या ज़िन्दगीके आखिर तक भी अगर इस सबक़पर चल सका तो अपनेको भाग्यवान् समझूँगा।'

नासिरुद्दीन

सुलतान नासिरुद्दीन बड़ा धर्मनिष्ठ और स्वावलम्बी था। वह राज-कोषसे कुछ भी न लेकर हाथसे किताबोंकी नक़लें तैयार करके गुजर करता था। रसोई भी बेगमको खुद बनानी पड़ती थी। एक रोज़ उसने बादशाहसे प्रार्थना की—'खाना पकानेमें मेरी उँगलियाँ झुलसती हैं, एक नौकरानी तो रख दीजिए।' बादशाह बोले—खज़ानेपर मेरा कोई अधिकार नहीं, वह तो प्रजाकी सम्पत्ति है। और मेरी हाथकी सीमित कमाईमें नौकरानी कैसे रक्खी जा सकती है ?'

हरीच्छा

अत्याचारी रोमन सम्राट् नीरोका ज़माना था। तब एग्रीपीनस नामका एक सत्यवादी, निर्भीक वीर रहता था। वह बड़ा ही सहनशील और आनन्दी स्वभावका था।

कई दिनके बाद उसे खाना नसीब हुआ। अपने मित्रके साथ बैठकर खाना शुरू ही करनेवाला था कि दरवाज़ा खोलकर नीरोके सिपाही घुस आये।

सिपाहियोंकी टुकड़ीका सरदार बोला—'एग्रीपीनस ! सम्राट् नीरोने तुम्हें सज़ा दी है।'

'काहेकी ? मौतकी ?'

'नहीं, देशनिकालेकी।'

'शुक्र है खुदाका। पर ज़रा ठहर सकोगे ? मैं खाना खा लूँ।'

'मुझे अफ़सोस है ! नीरोका हुक्म है कि तुम्हें फ़ौरन् अफ़रीक़ा भेज दिया जाय।'

'तो चलो, अफ़ीरीक़ा चलकर जीमेंगे। यही ईश्वरकी मर्ज़ी होगी।' एग्रीपीनस हँसते हुए बोला।

कच्चा-पक्का

सन्त-मण्डलीके साथ ज्ञानेश्वर महाराज भक्त गोरा कुम्हारके घर आये। नामदेव भी साथ थे। ज्ञानेश्वरने गोरासे कहा—'तुम कुशल कुम्भकार हो। शरीर भी तो मिट्टीका बरतन ही है। बताओ तो हममेंसे कौन-सा बरतन कच्चा है ?'

गोराने पिटनी लेकर नम्बरवार सब सन्तोंको ठोकना शुरू कर दिया। सब सन्त मार खाकर भी शान्त रहे। जब नामदेवकी बारी आई तो वे बिगड़ उठे। गोरा बोले—'यह बरतन कच्चा है।'

इस अपमानसे नामदेव बड़े दुखी हुए। उन्होंने प्रार्थनामें प्रभुसे इसकी शिकायत की।

जवाब आया—'अभा तुझमें भेद-भाव है, इसलिए अभी तू कच्चा ही है। शिवालयमें सन्त विठोबा खेचरसे ज्ञान प्राप्त कर।'

नामदेव विठोबाके पास गये। विठोबा अपने पैर शिवकी पिंडीपर धरे सो रहे थे। यह देखते ही नामदेवको बड़ी अश्रद्धा हुई। कह बैठे—'आप बड़े सन्त कहलाते हैं और शंकरकी पिंडीपर पैर रखते हैं!'

विठोबा—'तो मेरे पैर उठाकर उस जगह रख दो जहाँ शिव-पिंडी न हो।'

नामदेवने उनके पैर हटाकर अन्यत्र रक्खे। मगर वहाँ भी शिव-पिंडी उनके पैरोंके नीचे दीख पड़ी। वह उनके पैर उठा-उठाकर अलग रखते जाते मगर शिव-पिंडी उनके पैरोंके नीचे ही रहती। यह देखकर नामदेव असमंजसमें पड़ गये। विठोबा खेचरके चरण पकड़कर इसका रहस्य पूछा। विठोबाने उन्हें अद्वैतका बोध कराया। नामदेवकी द्वैत-बुद्धि मिट गई। अब वह भी 'पक्के बरतन' बन गये।

सबका ईश्वर एक

पेरिसमें, एक झोपड़ेमें, इब्राहीम अपनी बीबी और बच्चोंके साथ रहता था। अगरचे वह ग़रीब था मगर धर्मात्मा और उदार था। उसका घर शहरसे दस मील दूर था। आने-जाने वाले यात्री उसके यहाँ अक्सर ठहरा करते थे। इब्राहीम उनकी मुनासिब मेहमांनवाज़ी करता था। जब यात्री परिवारवालोंके साथ भोजन करने बैठते, तब इब्राहीम खानेसे पहले एक प्रार्थना बोलता और ईश्वरका आभार मानता। उसके मेहमान भी प्रार्थनामें शामिल होते।

यह क्रम कुछ अरसे तक चलता रहा। लेकिन सब दिन समान नहीं होते। कुछ वर्षोंके बाद इब्राहीम बहुत ग़रीब हो गया। फिर भी उसने यात्रियोंका स्वागत करना बन्द न किया। वह और उसके परिवारवाले एक बार भोजन करते और दूसरी वक़्तका खाना यात्रियोंके लिए रख छोड़ते। इससे इब्राहीमको बड़ा आनन्द होता, मगर साथ ही उसे यह अभिमान होने लगा कि वह बड़ा पुण्यात्मा है। वह अपने धर्मको भी दुनियाका सबसे बड़ा धर्म मानने लगा।

एक रोज़ एक थका-मादा बूढ़ा आदमी इब्राहीमके यहाँ आया। बेचारा बहुत कमज़ोर था। कमर कमानकी तरह झुकी हुई थी और कमज़ोरीके कारण उसके क़दम भी सीधे नहीं पड़ते थे। उसने इब्राहीमका दरवाज़ा खटखटाया। इब्राहीमने उसका स्वागत किया और आरामसे बैठाया। थोड़ी देरके बाद बूढ़ा बोला—'बेटा, मैं बड़ी दूरसे आया हूँ, बहुत भूखा हूँ।'

इब्राहीम उठा और खाना लाया। खाना शुरू करनेसे पहले इब्राहीमने, हस्ब-मामूल, अपनी प्रार्थना पढ़ी। उसकी स्त्री और बच्चोंने प्रभुके आभार-प्रदर्शनमें भी भाग लिया। इब्राहीमने देखा कि वह बूढ़ा उनके साथ प्रार्थनामें शामिल नहीं हुआ। इसलिए उसने उससे पूछा—'क्या तुम हमारे

ईश्वरमें विश्वास नहीं करते ? तुमने हमारे साथ प्रार्थना क्यों नहीं बोली ?'

बूढ़ेने जवाब दिया—'हम अग्निकी पूजा करते हैं ।'

यह सुनकर इब्राहीम भड़क उठा । उसने चिल्लाकर कहा—'अगर तुम्हें मेरे ईश्वरमें विश्वास नहीं है, और मेरी प्रार्थना बोलनेसे इनकार है, तो तुम इसी वक़्त घरसे निकल जाओ ।'

इब्राहीमने बिना खाना खिलाये बुड्ढेको घरसे निकाल दिया और दरवाज़ा बन्द कर दिया । लेकिन ज्यों ही उसने ऐसा किया कि कमरेमें प्रकाशकी एक ज्योति फैली और एक फरिश्ता प्रकट हुआ । और इब्राहीमसे बोला—'यह तुमने क्या किया ? ईश्वर इस ग़रीब बूढ़े आदमीका सौ वर्षसे भरण-पोषण करता रहा है मगर तुम धर्मात्मा बननेपर भी उसे सिर्फ़ इसलिए खाना न खिला सके कि वह अन्य धर्मावलम्बी है । दुनियामें कितने ही धर्म हों लेकिन ईश्वर एक है और वह सबका पिता है ।'

यह कहकर फ़रिश्ता ग़ायब हो गया । इब्राहीमको अपनी मूर्खताका ज्ञान हुआ । वह बूढ़ेके पीछे भागा और उससे माफ़ी माँगी । क्षमा करते हुए बूढ़ेने कहा—'शायद तुमने अनुभव कर लिया कि ईश्वर एक है ।' इब्राहीम यह सुनकर दंग रह गया, क्योंकि फ़रिश्तेने भी उससे यही बात कही थी ।

भ्रम

एक युवकने बी० ए० पास किया । नौकरी मिली । शादी की । बीमा करवाया ।

एक साधुने उससे पूछा—'अभी तो तुम्हारी उम्र छोटी है, इतनी जल्दी बीमा क्यों कराया ?'

युवक बोला—'महाराज ! जिन्दगीका क्या ठिकाना ! शायद कुछ हो गया तो मेरी पत्नीको कष्ट न हो इसलिए बीमा करवाया है ।'

इसपर साधुने कहा—'तब तू रोज भगवान्‌का नाम स्मरण करता रह ।'

युवक बोला—'उसके लिए अभी बहुत वक़्त है । बुढ़ापेमें देखूँगा ।'

यह सुनकर साधुको हँसी तो आई मगर चुप रहा ।

भगवान्‌के भगवान् !

एक बार नारद ऋषि द्वारका आये । उन्हें रोक तो थी ही नहीं, अन्दर तक चले गये । पर कहीं भगवान् कृष्ण न दिखे । आखिर उन्होंने रुक्मिणीसे पूछा—'यजमान कहाँ हैं ?'

'पूजामें बैठे हुए हैं ।'

यह सुनकर नारद हैरतमें पड़ गये । सोचने लगे कि त्रिभुवनके ऋषि, मुनि, संत, सिद्ध, योगी, त्यागी, भोगी सब जिसको भगवान् मानकर पूजते हैं वह किसकी पूजा करता है ! नारद देवघरमें दाखिल हुए । देखते हैं कि भगवान् भक्तोंकी मूर्तियोंके सामने ध्यानावस्थित बैठे हुए हैं !

सुखी कौन ?

एक गाँवमें एक ब्रह्मचारी रहता था । हनुमान्‌के मंदिरमें रहता, लंगोटी लगाता, भिक्षा माँगता और उपासना, भजन, नामस्मरण करता हुआ आनन्दसे दिन गुज़ारता था ।

एक दिन एक बड़ा रईस उस मंदिरमें आया । उसके नौकर-चाकर और ठाठ-बाट देखकर ब्रह्मचारीको लगा कि यह बड़ा सुखी आदमी होना चाहिए । उसने उससे पूछा । रईस बोला—'मैं सुखी कहाँ ! मेरे कोई बालबच्चा नहीं है । अमुक गाँवमें जो धनवान् रहता है उसके चार लड़के हैं । वह है सच्चा सुखी ।'

ब्रह्मचारी उस श्रीमंतके यहाँ गया। वह बोला—'अरे, मैं काहेका सुखी! मेरे लड़के मेरी आज्ञा नहीं मानते। पढ़े-लिखे भी नहीं हैं। दुनियामें विद्याका मान है। उस गाँवमें जो विद्वान् रहता है वह है सच्चा सुखी।' ब्रह्मचारी उस विद्वान्के पास गया। उसने कहा—'मुझे सुख कहाँ! तमाम हड्डियाँ सुखाकर मैंने विद्या पढ़ी, पर मुझे पेट भरने लायक़ भी नहीं मिलता। अमुक गाँवमें जो नेता रहता है सुखी तो वह है।' ब्रह्मचारी उस नेताके पास गया। नेता बोला—'मुझे सुख कैसे हो? मेरे पास धन है, विद्या है, कीर्ति है, बालबच्चे हैं। सब है, पर लोग मेरी बड़ी निन्दा करते हैं। यह मुझे सहन नहीं होता। उस गाँवमें हनुमान्के मंदिरमें रहनेवाला, भिक्षा माँगकर भगवान्के भजन-उपासनामें मस्त रहनेवाला एक ब्रह्मचारी है। सचमुच सुखी आदमी कोई है तो वह है।' ब्रह्मचारी अपना ही वर्णन सुनकर शर्माया और अपनी जगह लौट आया और पूर्ववत् सुखसे रहने लगा।

द्रौपदी

युधिष्ठिर द्रौपदीको जुएमें हार गये। दुर्योधनने उसे सभामें लानेका हुक्म किया। दुःशासन उसे सभामें खींचकर लाया और आज्ञा पाकर उसे नंगी करने लगा! सारी सभा चुपचाप तमाशा देखती रही। द्रौपदीने धर्मराज युधिष्ठिरसे कहा—'आप मेरी रक्षा करें।' धर्मराज बोले—'सत्य मेरा व्रत है। उसे छोड़कर मैं तेरी रक्षा नहीं कर सकता।' उसने भीमसे कहा। भीम बोले—'क्या करूँ! यह धर्मराज मुझे कुछ करने नहीं देते। इनकी आज्ञाका उल्लंघन मैं कैसे करूँ?' उसने अर्जुनकी तरफ़ देखा। अर्जुन गरदन झुकाये बैठे रहे। नकुल व सहदेव भी यूँ ही रह गये। तब उसने भगवान्को पुकारा और उन्होंने उसकी लाज रखी।

इस घटनाके कुछ अर्से बाद एक रोज़ द्रौपदीने कृष्णसे पूछा—'कृष्ण ! वस्त्रहरणके वक़्त तू आने ही वाला था तो मेरी इतनी विडम्बना होने तक रुका क्यों रहा ?' कृष्णने जवाब दिया—'मैं तो तेरी मददको आया हुआ था। लेकिन तेरा ध्यान मेरी तरफ़ नहीं था। तू अपने रक्षणके लिए पाण्डवोंपर आस लगाये थी। जब मुझे पुकारा तो मैंने तत्काल अपना काम शुरू कर दिया।'

दुनिया

एक साधुने चार वृद्धजन बुलाये और उनसे दुनियाका अनुभव पूछा—

पहला—'अरे दुनिया बड़ी मक्कार है ! हरएक किसी-न-किसी तरहके छलसे अपना उल्लू सीधा करनेमें लगा हुआ है।'

दूसरा—'क्या कहें ! आज दुनियामें इतनी अनीति बढ़ गई है कि किसीका भी विश्वास नहीं किया जा सकता।'

तीसरा—'दुनियामें सब स्वार्थके सगे हैं।'

चौथा—'इस दुनियामें सुख व समाधान बिलकुल नहीं।'

सबकी सुनकर साधु बोला—'तो चलो भाई, हम सब संन्यास ले लें। ऐसी दुनियामें लगे रहनेसे क्या फ़ायदा ?....' आगे साधु क्या कहता है यह सुननेके लिए एक भी बुड्ढा न ठहरा !

दुनियाका सुख

एक आदमी जंगलमेंसे जा रहा था। उसने एकाएक शेरकी दहाड़ सुनी। वह भागा। थोड़ी दूर भागनेपर उसे एक मदोद्धत हाथी दिखा जो उसकी तरफ़ लपक कर आने लगा। आदमी बेचारा आड़े रस्ते दौड़ने

लगा। पर घास बड़ी उगी हुई थी इसलिए रास्ता साफ़ न दिखनेके कारण वह एक कुएँमें जा गिरा। उसमें पानी ज़्यादा नहीं था, पर वहाँ एक भयंकर साँप था। उसे देखकर आदमी एक पेड़की जड़के सहारे ऊपर चढ़ने लगा और किनारे पर उगे हुए एक वृक्षकी डालको पकड़कर लटक गया। एक सफ़ेद और एक काला चूहा उस डालको काट रहे थे। नीचे साँप मुँह फाड़े उसके गिरनेकी बाट देख रहा था। उस वृक्षपर मधु-मक्खियोंका एक छत्ता था, जिससे कभी-कभी एक बूँद शहद टपकता था और उस आदमीकी नाकपर पड़ता था जिसे चाटकर वह सुख अनुभव करता था।

ऐसा है दुनियाका सुख!

खोटा वेदान्त

एक न्यायाधीश था। वह बड़ा भक्त था। एक बार एक चोर उसके सामने लाया गया। चोरने अपना जुर्म क़बूल किया। सज़ा देनेसे पहले न्यायाधीश बोला—

'तुझे और कुछ कहना हो तो कह सकता है।'

चोर गम्भीर होकर कहने लगा—'जज साहब! आज आपके सामने खड़ा रहनेमें मुझे बड़ा आनन्द हो रहा है। मैंने सुना है कि आप बड़े भक्त हैं। मुझे सिर्फ़ यही कहना है कि मैंने अपने वश चोरी नहीं की। भगवान्‌ने मुझे जैसी प्रेरणा दी वैसा मैंने किया। उसकी इच्छासे मेरे हाथों चोरी हुई है। इसलिए उसके लिए मुझे दोषी न ठहरायें।'

चोरकी बात सुनकर कचहरीवाले देखते-के-देखते रह गये।

लेकिन न्यायाधीश पक्का निकला। उसने फ़ैसला दिया—'चोरका कहना मुझे पूरी तरह मान्य है। जिस भगवान्‌ने उसे चोरी करनेकी प्रेरणा

दी वही भगवान् मुझे उसे सज़ा देनेकी प्रेरणा कर रहा है। जैसे चोरी भगवान्की इच्छासे हुई वैसे ही सज़ा भी भगवान्की इच्छासे दी जा रही है। एक वर्ष, सख्त क़ैद।'

चिन्ता

चिन्ता बड़ी विलक्षण है! एक आदमीको लड़केकी शादीकी चिन्ता थी। कुछ दिनों बाद शादी हो गई। तब इस बातकी चिन्ता लग गई कि बहूका वर्तन अच्छा नहीं है। फिर इस बातकी चिन्ता लगी कि उसके बच्चा नहीं होता। कुछ समयमें उसके बच्चा हो गया। लेकिन उस बच्चेको फ़िट आने लगे, इसलिए इसकी चिन्ता हो गई। आखिर कुछ काल बाद बच्चेको फ़िट आना बन्द हुआ तो बुड्ढेको फ़िट आने लगे। उसकी चिन्ता करते-करते मर गया।